BAMT(N)-202

हिन्दुस्तानी संगीत सिद्धान्त–तबला एवं प्रयोगात्मक
चतुर्थ सेमेस्टर

संगीत–तबला में स्नातक (बी0ए0)

चतुर्थ सेमेस्टर

संगीत, नृत्य एवं कला प्रदर्शन विभाग

मानविकी विद्याशाखा

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी

BAMT(N)-202

हिन्दुस्तानी संगीत सिद्धान्त – तबला एवं प्रयोगात्मक

संगीत–तबला में स्नातक(बी0ए0)
चतुर्थ सेमेस्टर
संगीत, नृत्य एवं कला प्रदर्शन विभाग
मानविकी विद्याशाखा

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
तीनपानी बाईपास रोड, ट्रान्सपोर्ट नगर के पीछे,
हल्द्वानी – 263139
फोन नं0 : 05946–286000/01/02
फैक्स नं0 : 05946–264232,
टोल फ्री नं0 : 18001804025
ई–मेल : **info@uou.ac.in**
वेबसाईट : **www.uou.ac.in**

अध्ययन मंडल समिति

अध्यक्ष
कुलपति,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय

संयोजक
निदेशक–मानविकी विद्याशाखा
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय

प्रो0 पंकजमाला शर्मा(स.)
पूर्व विभागाध्यक्ष–संगीत विभाग
पंजाब विश्वविद्यालय, चंडीगढ़

डॉ0 विजय कृष्ण(स.)
पूर्व विभागाध्यक्ष–संगीत विभाग
कुमाऊँ विश्वविद्यालय, नैनीताल

डॉ0 मल्लिका बैनर्जी(स.)
संगीत विभाग,
इग्नू, दिल्ली

प्रदीप कुमार(स.)
संगीत, नृत्य एवं कला प्रदर्शन विभाग,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,

डॉ0 द्विजेश उपाध्याय(आ.स.)
संगीत, नृत्य एवं कला प्रदर्शन विभाग,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,

डॉ0 जगमोहन परगांई(आ.स.)
संगीत, नृत्य एवं कला प्रदर्शन विभाग,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,

डॉ0 अशोक चन्द्र टम्टा(आ.स.)
संगीत, नृत्य एवं कला प्रदर्शन विभाग,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,

डॉ0 प्रकाश चन्द्र आर्या(आ.स.)
संगीत, नृत्य एवं कला प्रदर्शन विभाग,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,

पाठ्यक्रम संयोजन

प्रदीप कुमार
संगीत, नृत्य एवं कला प्रदर्शन विभाग,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,

डॉ0 द्विजेश उपाध्याय
संगीत, नृत्य एवं कला प्रदर्शन विभाग,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,

डॉ0 जगमोहन परगांई
संगीत, नृत्य एवं कला प्रदर्शन विभाग,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,

डॉ0 अशोक चन्द्र टम्टा
संगीत, नृत्य एवं कला प्रदर्शन विभाग,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,

डॉ0 प्रकाश चन्द्र आर्या
संगीत, नृत्य एवं कला प्रदर्शन विभाग,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,

प्रूफ रिडिंग एवं फार्मेटिंग

डॉ0 द्विजेश उपाध्याय
संगीत, नृत्य एवं कला प्रदर्शन विभाग,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय

डॉ0 प्रकाश चन्द्र आर्या
संगीत, नृत्य एवं कला प्रदर्शन विभाग,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय

इकाई लेखन

1.	डॉ0 मनीष डंगवाल	इकाई 1
2.	डॉ0 विजय कृष्ण	इकाई 2, 3, 4, 6 एवं 7
3.	डॉ0 रेखा साह	इकाई 5

कापीराइट : @उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय
संस्करण : सीमित वितरण हेतु पूर्व प्रकाशन प्रति
प्रकाशन वर्ष : जनवरी 2025
प्रकाशक : उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी, नैनीताल
ई–मेल **: books@uou.ac.in**

नोट – इस पुस्तक की समस्त इकाईयों के लेखन तथा कॉपीराइट संबंधी किसी भी मामले के लिए संबंधित इकाई लेखक जिम्मेदार होगा। किसी भी विवाद का निस्तारण सत्र न्यायालय–हल्द्वानी अथवा उच्च न्यायालय–नैनीताल में किया जाएगा। इस सामग्री के किसी भी अंश को उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप में अथवा मिमियोग्राफी चक्रमुद्रण द्वारा या अन्यत्र पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

BAMT(N)-202

हिन्दुस्तानी संगीत सिद्धान्त – तबला एवं प्रयोगात्मक

संगीत–तबला में स्नातक(बी0ए0) चतुर्थ सेमेस्टर

इकाई	इकाई का नाम	पृष्ठ
इकाई–1	भारतीय संगीत का इतिहास–प्राचीन काल।	1-09
इकाई–2	लखनऊ, बनारस व फर्रूखाबाद घराने की वंश परम्परा, वादन शैली/बाज, विशेषताएँ एवं प्रमुख तबला वादकों का योगदान।	10-26
इकाई–3	ताल के दस प्राण (काल, मार्ग, क्रिया, अंग, ग्रह, जाति, कला, लय, यति व प्रस्तार) का संक्षिप्त अध्ययन।	27-42
इकाई–4	तबला वादकों का जीवन परिचय(उ0 हबीबुद्दीन खां, पं0 स्वपन चौधरी व पं0 कण्ठे महाराज)।	43-47
इकाई–5	संगीत संबंधी विषयों पर निबंध।	48-56
इकाई–6	पाठयक्रम की तालों आड़ाचारताल, गजझंपा ताल एवं तीवरा ताल का परिचय एवं बोल समूह द्वारा ताल पहचानना; पाठयक्रम की तालों आड़ाचारताल, गजझंपा ताल एवं तीवरा ताल के ठेके को दुगुन, तिगुन एवं चौगुन लयकारी सहित लिपिबद्ध करना।	57-63
इकाई–7	पाठ्यक्रम की तालों आड़ाचारताल, गजझम्पा ताल एवं तीवरा ताल में तबले/पखावज की रचनाओं(पाठ्यक्रमानुसार) को लिपिबद्ध करना।	64-77

इकाई 1 – भारतीय संगीत का इतिहास – प्राचीन काल।

1.1 प्रस्तावना
1.2 उद्देश्य
1.3 भारतीय संगीत का इतिहास
  1.3.1 प्रागऐतिहासिक काल
  1.3.2 ऐतिहासिक काल
1.4 सारांश
1.5 शब्दावली
1.6 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
1.7 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
1.8 निबन्धात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0 संगीत के पाठ्यक्रम (बी0ए0एम0टी0(एन)–202) के प्रथम खण्ड की पहली इकाई है। आप अभी तक भारतीय शास्त्रीय संगीत के मूलभूत तत्वों से परिचित हो चुके होंगे।

इस इकाई का अध्ययन भारतीय संगीत के इतिहास क्रम के प्राचीन काल में हुए सांगीतिक विकास का ज्ञान कराता है। इस इकाई में प्राचीन काल में रचे गए प्रमुख सांगीतिक ग्रन्थों से भली–भांती परिचित होंगे।

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप भारतीय संगीत के इतिहास (प्राचीनकाल) को भली–भांति जान पाएंगे तथा प्राचीन के संगीत प्रचारकों के बारे में भी जान सकेंगे।

1.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप :–

- भारतीय संगीत के प्राचीन कालीन संगीत के विकास क्रम को समझ सकेंगे।
- जान सकेंगे कि भारतीय संगीत के कौन–कौन से महत्वपूर्ण ग्रंथ प्राचीन काल में रचे गए व उनमें किन–किन विषयों का वर्णन किया गया है। इन्हीं ग्रंथों से प्राचीन के अनेक संगीतज्ञों के नाम भी ज्ञात होते हैं, जिनके भारतीय संगीत में योगदान के विषय में हमें पूर्ण रूप से ज्ञान नहीं है। अर्थात् उनके ग्रंथ आदि आधुनिक काल में प्राप्त नहीं हैं।
- जान सकेंगे कि प्राचीन काल में बंदिश, सप्तक, अष्टक, नायक, गायक, मुखडा आदि किस प्रकार व कब से भारतीय संगीत में समावेशित हुए हैं।

1.3 भारतीय संगीत का इतिहास

किसी क्षेत्र विशेष का इतिहास वहां के निवासियों की राजनैतिक विचारधारा, आर्थिकी, पर्यावरण तथा संस्कृति का द्योतक होता है। भारतीय संगीत, भारतीय संस्कृति का एक महत्वपूर्ण अंग व पहचान है। आधुनिक कालीन विद्वानों द्वारा भारतीय संगीत के ऐतिहासिक क्रम को मुख्य रूप से दो भागों में विभक्त किया गया है – प्राग्ऐतिहासिक काल तथा ऐतिहासिक काल।

प्राग्ऐतिहासिक काल के अन्तर्गत भारतीय संगीत के इतिहास का वह भाग समाहित है जिसमें वेद साहित्य, वेदांग साहित्य, पुराण, रामायण व महाभारत महाकाव्य तथा बौद्ध व जैन धर्म ग्रंथ रचे गए। इन ग्रंथों में भारतीय संगीत के उद्गम व विकास क्रम के अनेक प्रमाण प्राप्त होते हैं। इन ग्रंथों में पौराणिक युग के अनेक सांगीतिक विद्वानों, विभिन्न सांगीतिक तत्वों नृत्य, गीत विधाओं, वाद्यों आदि का वर्णन प्राप्त होता है। भारतीय संगीत के इतिहास का यह प्रथम काल खण्ड माना जाता है। इस काल खण्ड को वैदिक युग अथवा पौराणिक युग भी कहा जाता है। इस युग में रचे गए ग्रंथों का सही–सही समय निर्धारण नहीं हो पाया है। इस युग में भारतीय चिन्तन, बौद्धिक विचारधारा, सभ्यता एवं संस्कृति को व्यक्त करने वाले अनेक ग्रंथ रचे गए जैसे–वेद, उपनिषद, शिक्षा ग्रंथ, ब्राह्मण ग्रंथ, रामायण, महाभारत, 18 महापुराण, बौद्ध व जैन धर्म साहित्य आदि।

इतिहासकारों के अनुसार जिस काल खण्ड की तिथि निर्धारित की जा चुकी है। वह काल खण्ड ऐतिहासिक काल कहलाता है। प्राचीन भारतीय संगीत के ग्रंथों में उनकी लेखन तिथियां प्राप्त नहीं होती। इस दृष्टिकोण से आधुनिक इतिहासकारों व संगीतकारों को संगीत के ग्रंथों की लेखन तिथियां निर्धारित करने के लिए उन ग्रंथों में दिए गए नामोल्लेखों, आख्यानों आदि अनेक प्रकार के तथ्यों पर आश्रित रहना पड़ता है। इस प्रकार निर्धारित की गई तिथियां अनुमानित तिथियां ही होती हैं। इस आधार पर भारतीय संगीत के तत्वों को व्यक्त करने वाला प्रथम ग्रंथ नारदीय शिक्षा है, जिसका रचना काल निर्धारित किया

जा चुका है। भारतीय संगीत के दृष्टिकोण से ऐतिहासिक काल को तीन खण्डों में वर्गीकृत किया जाता है – प्राचीन काल(8वीं शताब्दी ई0पू0 से 12वीं शताब्दी ई0 तक), मध्य काल(13वीं शताब्दी ई0 से 18वीं शताब्दी ई0 तक) तथा आधुनिक काल(19वीं शताब्दी से वर्तमान काल)। इस इकाई में प्राग्ऐतिहासिक काल तथा ऐतिहासिक काल के प्राचीन व मध्य काल में रचे गए सांगीतिक ग्रंथों व तत्कालीन सांगीतिक परम्पराओं का अध्ययन प्रस्तुत है।

<u>1.3.1 प्राग्ऐतिहासिक काल</u> – इकाई के इस खण्ड में हम सामवेद, रामायण व महाभारत महाकाव्य ग्रंथों के संगीत से सम्बन्धित विवरणों का अध्ययन करेंगे। जहां सामवेद में भारतीय संगीत के आरम्भिक लक्षण दृष्टिगोचर होते हैं वहीं रामायण व महाभारत कालीन समाज में संगीत धर्मी कलाकारों व संगीत के प्रति सम्मान दिखता है। इन ग्रंथों के अध्ययन से भारतीय संगीत के विकास क्रम व उसके प्रति तत्कालीन समाज के दृष्टिकोण का पता चलता है। इस खण्ड में आप इन ग्रंथों में तथा इनके रचना काल में सांगीतिक विकास व दशा का अध्ययन करेंगे।

<u>वैदिक काल (सामवेद)</u> – भारतीय संगीत का उद्गम सामवेद से ही माना जाता है। भारतीय वाङ्मय के चतुर्वेदों में से सामवेद गेय वेद है। सामवेद में संकलित ऋचाओं को गाया जा सकता है। यह प्रथम ग्रंथ है जिसमें भारतीय संगीत का आदिम रूप दृष्टिगोचर होता है। सामवेद ग्रंथ के दो खण्ड हैं–पूर्वार्चिक तथा उत्तरार्चिक। सामवेद के प्रथम खण्ड पूर्वार्चिक में जिन ऋचाओं का संकलन है वे तृस्वर युक्त हैं। तात्पर्य यह है कि पूर्वार्चिक में संकलित ऋचाओं का गायन तीन स्वरों में किया जाता है। जबकि उत्तरार्चिक में संकलित ऋचाओं का गायन सात स्वर युक्त होता है। इसी तथ्य से हमें ज्ञात हो जाता है कि वैदिक काल में ही संगीत में सात स्वर प्रयुक्त होने लगे थे। सामवेद में दो प्रकार के सांगीतिक स्वरों का उल्लेख प्राप्त होता है–वैदिक स्वर तथा लौकिक स्वर। वैदिक स्वरों का प्रयोग वैदिक संगीत अर्थात् साम संगीत में ही किया जाता था। लौकिक स्वरों का प्रयोग सामान्य जन द्वारा लौकिक समारोहों में आयोजित किए जाने वाले सांगीतिक सम्मेलनों में जन मनोरंजन के लिए किया जाता था। सामवेद में लौकिक संगीत के स्वरों की संज्ञाएं भी प्राप्त होती हैं–षड्ज, ऋषभ, गान्धार, मध्यम, पंचम, धैवत तथा निषाद। सामवेद प्रथम ग्रंथ है जिसमें संगीत के लौकिक स्वरों के नाम प्राप्त होते हैं। इसके अतिरिक्त सामवेद की ऋचाओं का गायन करने के दो प्रमुख अंग रहे हैं – सामगान व सामविकार।

सामवेद की ऋचाओं के गायन को साम–गान कहा जाता है। सामगान करने वाले विद्वान ऋषि–ऋत्विज कहलाते थे, जिन्हें यज्ञ की आवश्यकता अनुसार यजमान द्वारा नियुक्त किया जाता था। इनकी संख्या तीन रहती थी जिन्हें प्रस्तोता, उद्गाता तथा प्रतिहर्ता कहा जाता है। इनके अतिरिक्त तीन से छः तक उपगाताओं का भी सामगान के अंतर्गत चयन किया जाता रहा है जिनका कार्य ऋत्विजों के स्वर से चार स्वर नीचे के स्वर का निरंतर गान करना था जिससे सामगान में निरंतरता बनी रहे। प्राचीन काल में साम गान दो प्रकार से किया जाता रहा है – पंचविध सामगान तथा सप्तविध सामगान। पंचविध साम के अंतर्गत सामगान के पांच खण्ड करके गाने की प्रथा रही है जबकि सप्तविध सामगान के अंतर्गत साम गान के सात खण्ड करके गाने की प्रथा रही है। इन दो प्रकार के साम को ही क्रमशः पंचभक्ति साम तथा सप्तभक्ति साम भी कहा जाता है। पंचविध साम के पांच खण्ड – प्रस्ताव, उद्गीथ, प्रतिहार, उपद्रव एवं निधन हैं जबकि सप्तविध साम के सात खण्ड – हिंकार, प्रस्ताव, आदि, उद्गीथ, प्रतिहार, उपद्रव एवं निधन हैं।

ऋग्वेद की कुछ चुनी हुई ऋचाओं तथा कुछ अन्य ऋचाओं का संकलन सामवेद में किया गया है तथा सामवेद में संकलित इन ऋचाओं का गायन किया जाता है, जो सामगान कहलाता है। ऋग्वेद में ऋचाओं का संकलन पाठ्य भेद से हुआ है। इसलिए ऋग्वेद की ऋचाओं को गेयत्व प्रदान करने के लिए उनमें कुछ परिवर्तन करने पड़ते हैं ताकि सामगान के अंतर्गत उनका गायन सहज, सरल तथा तारतम्यता पूर्ण ढंग से किया जा सके। इन परिवर्तनों को साम विकार कहा जाता है। साम विकार मुख्यतः छः प्रकार के हैं – विकार, विश्लेषण, विकर्षण, अभ्यास, विराम तथा स्तोभ।

<u>**विकार**</u> – मूल ऋचा में गेयत्व की सुगमता के लिए कुछ परिवर्तन करना, विकार कहलाता है। जैसे मोर शब्द को मोरवा या मुरवा या मोरला या मुरला गाना।
<u>**विश्लेषण**</u> – गेयत्व की सुगमता के लिए किसी पद या अक्षर का पृथकीकरण कर गान करना, विश्लेषण कहलाता है। जैसे बंदिश की प्रथम पंक्ति के अंतिम शब्द का रे जाने ना दूंगी ए री माई पंक्ति में माई शब्द को तोड़कर मा का गायन कर पुनः सम्पूर्ण पंक्ति का गायन करना।
<u>**विकर्षण**</u> – किसी लघु पद को दीर्घ या दीर्घ पद को लघु बना कर गायन करना, विकर्षण कहलाता है। जैसे पिया को पियाऽऽऽऽ या दिना को दीना या मोरला को मुरला गाना।
<u>**अभ्यास**</u> – किसी पद को बारम्बार दोहराना, अभ्यास कहलाता है। जैसे साजन मोरे घर आए को साजन मोरे घर आए आए गाना।
<u>**विराम**</u> – किसी पद को गाते हुए कुछ विराम कर आगे के पद का गायन करना, विराम कहलाता है। उदाहरण स्वरूप – अरि ए री आली पिया बिन गाने के बाद कुछ विराम कर(जरा सा) सखि कल ना परत मोहे........ गाना।
<u>**स्तोभ**</u> – मूल ऋचा में मात्रा पूर्ण करने व लय की आवश्यकता अनुसार जिन अतिरिक्त वर्णों, अक्षरों या पदों का प्रयोग किया जाता है, वे स्तोभ या स्तोभाक्षर कहलाते हैं। जैसे–हुम्, हाउ, औहोवा आदि। संगीत रत्नाकर में 13 स्तोभ बताए गए हैं।

<u>महाकाव्य काल (रामायण व महाभारत)</u> – भारतीय ऐतिहासिक क्रम में वैदिक काल के पश्चात् महाकाव्य काल माना गया है। इस काल में भारतीय इतिहास, राजनैतिक विकास व संस्कृति के द्योतक दो महान ग्रंथ रचे गए – रामायण तथा महाभारत। ये दोनों ग्रंथ विशाल काव्य ग्रंथ हैं इसलिए इनके रचना काल को विद्वतजन महाकाव्य काल भी कहते हैं।

महाकाव्य रामायण की रचना महर्षि वाल्मीकि द्वारा की गई। स्वयं महर्षि वाल्मीकि का कथन है कि रामायण एक गेय ग्रंथ है अर्थात् यह ग्रंथ आदि से अंत तक गाया जा सकता है। इसलिए संगीत के दृष्टिकोण से यह ग्रंथ बहुत महत्वपूर्ण है। इस ग्रंथ में रामायण कालीन समाज में प्रचलित सांगीतिक परम्पराओं के अनेक उल्लेख प्राप्त होते हैं। रामायण में ऐसे अनेक वर्णन हैं जिससे ज्ञात होता है कि तत्कालीन समाज में संगीत व सांगीतिक कलाकारों के प्रति विशेष श्रद्धा तथा सम्मान की भावना रही है। वेदों के रचना काल के समान ही रामायण काल में भी संगीत की दो धाराएं – साम संगीत व लोक मनोरंजन की सांगीतिक धारा प्रचलित थी। तत्कालीन सम्भ्रांत व सामान्य वर्ग में संगीत शिक्षा अनिवार्य थी। शासन द्वारा सार्वजनिक स्थानों पर सांगीतिक शिक्षण केंद्र तथा सांगीतिक रंगशालाएं बनवाई गई थी। सांगीतिक समारोह तथा नाट्य रंगकर्म ही तत्कालीन समाज के मुख्य मनोरंजन के साधन थे। संगीत कर्मियों को राजाश्रय प्राप्त था। संगीत के विद्यार्थियों को भी शासन द्वारा विशेष सुविधाएं व राजाश्रय प्राप्त था। रामायण के उल्लेखों से ज्ञात होता है कि तत्कालीन संगीत मुख्यतया ग्राम व मूर्च्छना पर आधारित था परंतु तत्कालीन संगीत में ग्रामरागों के प्रचार के संकेत भी प्राप्त होते हैं।

वाद्यों के अंतर्गत रामायण काल में तंतु वाद्यों में वीणा, सुषिर वाद्यों में वेणु तथा ताल वाद्यों में पुष्कर वाद्यों को विशेष महत्व दिया गया है। वीणा तथा पुष्कर वाद्यों के अनेक प्रकार प्रचलित थे। तत्कालीन वीणाओं में मत्तकोकिला, विपंची व महती वीणा विशेष उल्लेखनीय हैं। रामायण में वर्णित सांगीतिक कलाकारों में अप्सराओं, गंधर्वों, नागरों व मागधों का विशेष स्थान रहा है। इनके अतिरिक्त रावण, मन्दोदरी, हनुमान, राम व लव–कुश को रामायण में श्रेष्ठ संगीतज्ञों की श्रेणी में रखा गया है। राजकुल के सदस्यों का संगीत प्रेमी व संगीतज्ञ होना यह दर्शाता है कि रामायण कालीन समाज में संगीत को श्रेष्ठ कला के रूप में मान्यता प्राप्त थी व संगीत को सम्मान की दृष्टि से देखा जाता था।

महाभारत ग्रंथ महर्षि व्यास द्वारा रचा तथा भगवान गणेश द्वारा लिखा गया है। महर्षि व्यास द्वारा इस ग्रंथ को जयग्रंथ कहा गया है परंतु कालांतर में जयग्रंथ को ही महाभारत कहा जाने लगा। रामायण के समान ही महाभारत भी एक महाकाव्य ग्रंथ है। काव्य की यह विशेषता होती है कि उसमें पद्यात्मक शैली के साथ ही लय भी विद्यमान होती है। यदि उसमें सांगीतिक स्वरों का भी समावेश कर लिया जाए

तो वही काव्य रचना गीत बन जाती है। इसलिए महाभारत ग्रंथ को भी गेय महाकाव्य माना जा सकता है। इस ग्रंथ का ही एक अंश– श्रीमद्भगवद् गीता, भगवान श्रीकृष्ण द्वारा गाया गया गीत ही है। रामायण काल के समान ही महाभारत काल में भी संगीत व सांगीतिक कलाकारों के प्रति विशेष श्रद्धा तथा सम्मान की धारणा रही है। तत्कालीन समाज में संगीत शिक्षा अनिवार्य थी। शासन द्वारा विभिन्न सार्वजनिक स्थानों पर सांगीतिक शिक्षण केंद्र तथा सांगीतिक रंगशालाएं बनवाई गई थीं। रामायण काल के समान ही महाभारत काल में भी सांगीतिक समारोह तथा नाट्य रंगकर्म ही तत्कालीन समाज के मुख्य मनोरंजन के साधन थे। संगीत कर्मियों और संगीत के विद्यार्थियों को शासन द्वारा विशेष सुविधाएं तथा राजाश्रय प्राप्त था। महाभारत में संगीत के महत्व का भान इसी तथ्य से हो जाता है कि पहले अर्जुन ने स्वर्ग में संगीत शिक्षा प्राप्त की तथा बाद में बृहन्नला रूप में विराट राज की पुत्री उत्तरा व अन्य राजकन्याओं को विराट राज के अनुग्रह पर संगीत शिक्षा प्रदान की। स्वयं श्रीकृष्ण उत्कृष्ट वंशी वादक तथा नर्तक थे। महाभारत के उद्धरणों से ज्ञात होता है कि उस काल में गान्धार ग्राम प्रचलित था। यह इस युग की विशेषता रही है। यद्यपि इस काल में ग्राम तथा मूर्च्छना पद्धति ही प्रचलित रही परंतु महाभारत में कुछ प्रसंगों में ग्रामरागों के प्रचार के संकेत भी प्राप्त होते हैं। सामजिक उत्सवों में पुरुषों व स्त्रियों की सामूहिक नृत्य, गीत, वाद्य वादन प्रस्तुतियां इस युग की विशेषता थी।

वाद्यों के अंतर्गत शंख, वेणु, वीणा के विभिन्न प्रकार, पुष्कर वाद्य के अनेक प्रकार, दुंदुभि के अनेक प्रकार आदि अनेक वाद्य प्रकार प्रचलित थे। संगीत के दृष्टिकोण से महाभारत युग अत्यंत उत्कृष्ट व उन्नत युग कहा जा सकता है।

<u>1.3.2 ऐतिहासिक काल</u> – इकाई के इस खण्ड में प्राचीन काल के तीन अतिमहत्वपूर्ण ग्रंथों–नारद मुनि कृत नारदीय शिक्षा, भरत मुनि कृत नाट्यशास्त्र व मतंग मुनि कृत बृहद्देशी तथा मध्य काल के तीन ग्रंथों–पं0 शार्ङ्गदेव कृत संगीत रत्नाकर, पं0 अहोबल कृत संगीत पारिजात व रामामात्य कृत स्वरमेलकलानिधि में वर्णित संगीत पर चर्चा की गई है। ये सभी ग्रंथ भिन्न–भिन्न काल खण्डों का प्रतिनिधित्व करते हैं। जहां नारदीय शिक्षा ईसा पूर्व की शताब्दियों में रचा गया है वहीं नाट्यशास्त्र ईसा की आरम्भिक शताब्दियों का प्रतिनिधि ग्रंथ है। वहीं बृहद्देशी प्राचीन कालीन सांगीतिक परम्पराओं से मध्य कालीन सांगीतिक परम्पराओं की ओर प्रवृत्ति का सूचक ग्रंथ है। संगीत रत्नाकर स्वयं में एक पूर्ण संगीत–शास्त्र है। यह ग्रंथ भारतीय सांगीतक इतिहास के मध्य काल के सूत्रपात को दर्शाता है। वहीं यह अंतिम ग्रंथ है जिसमें सम्पूर्ण भारत में संगीत की एक ही धारा के प्रवाहित होने के संकेत प्राप्त होते हैं। इस ग्रंथ के पश्चात् जितने सांगीतिक ग्रंथ रचे गए वे या तो उत्तर भारतीय संगीत से सम्बन्धित हैं या दक्षिण भारतीय संगीत से। संगीत पारिजात उत्तर भारतीय संगीत की व्याख्या करने वाला प्रथम ग्रंथ माना जाता है। वहीं स्वरमेलकलानिधि दक्षिण भारतीय संगीत के सिद्धांतों को व्यक्त करने वाला प्रथम ग्रंथ माना जाता है। इस इकाई में इन सभी ग्रंथों के अध्ययन से भारतीय संगीत के विकास क्रम का इतिहास जानने का प्रयास करेंगे।

<u>प्राचीन काल(8वीं शताब्दी ई0पू0 से 12वीं शताब्दी ई0 तक) :–</u>

<u>नारद मुनि कृत नारदीय शिक्षा</u> – नारदीय शिक्षा ग्रंथ की रचना नारद मुनि ने की है। इस ग्रंथ का रचना काल 8वी शताब्दी ई0पू0 से 5वी शताब्दी ई0पू0 के मध्य माना गया है। यह ग्रंथ आधुनिक काल में ज्ञात संगीत विषयक प्रथम ग्रंथ है। यह ग्रंथ मूल रूप से दो खण्डों में विभक्त है जिन्हें प्रपाठक कहा गया है तथा प्रत्येक प्रपाठक में आठ–आठ अध्याय हैं जिन्हें कण्डिका कहा गया है। इस ग्रंथ का प्रथम प्रपाठक साम संगीत तथा द्वितीय प्रपाठक लौकिक संगीत को समर्पित है। इस ग्रंथ में सर्वप्रथम व्यवस्थित रूप में संगीत के तत्वों का उल्लेख किया गया है। इस ग्रंथ में नारद मुनि ने वैदिक स्वरों के नाम इस प्रकार बताए हैं–कृुष्ट, प्रथम, द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ, मंद्र व अतिस्वार। इस ग्रंथ में वैदिक तथा लौकिक स्वरों की तुलना भी प्राप्त होती है। नारद मुनि के अनुसार वैदिक स्वर क्रुष्ट, प्रथम, द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ, मंद्र व

अतिस्वार ही वेणु पर स्थित क्रमशः पंचम, मध्यम, गान्धार, ऋषभ, षड्ज, धैवत व निषाद स्वर हैं। इससे ज्ञात होता है कि वैदिक सप्तक वक्र तथा अवरोही क्रम में था। इस ग्रंथ में सांगीतिक सप्त स्वरों के देवता, वर्ण, जाति, उत्पत्ति स्थान, ऋषि, जीवों से उत्पत्ति आदि के वर्णन भी प्राप्त होते हैं। इस ग्रंथ में श्रुति–जाति, स्वरमण्डल, तीन ग्राम, इक्कीस मूर्च्छनाओं, आचार्य व विद्यार्थी के गुणावगुण आदि का भी वर्णन किया गया है। नारदीय शिक्षा में वर्णित नारद के मतों का उल्लेख प्रायः सभी परवर्ती ग्रंथकारों ने अपने–अपने ग्रंथों में किया है।

<u>भरत मुनि कृत नाट्यशास्त्र</u> – जैसा कि नाम से ही ज्ञात हो जाता है कि नाट्यशास्त्र मूल रूप से नाट्य पर आधारित ग्रंथ है। यह ग्रंथ भरत मुनि द्वारा रचित ग्रंथ है। कुछ विद्वान इस ग्रंथ में 33 तो कुछ 36 अध्याय मानते हैं। नाट्य में संगीत का महत्वपूर्ण स्थान होने के कारण इस ग्रंथ के 28 से लेकर 33 तक के अध्यायों में भरत मुनि ने संगीत विषय पर वृहद् चर्चा की है। अतः यह ग्रंथ संगीत के विद्यार्थियों के लिए भी महत्वपूर्ण ग्रंथ है। नाट्यशास्त्र ग्रंथ का रचना काल दूसरी शताब्दी ईसा पूर्व से प्रथम शताब्दी ईसवीय तक बहुमत से माना गया है। पहले यह सामान्य मान्यता थी कि ऐतिहासिक दृष्टिकोण से नाट्यशास्त्र संगीत के तत्वों का वर्णन करने वाला प्रथम ग्रंथ है परंतु नवीनतम शोधों से ज्ञात हुआ है कि नारदीय शिक्षा ग्रंथ नाट्यशास्त्र का पूर्ववर्ती ग्रंथ है। नाट्यशास्त्र ग्रंथ नाट्य पर आधारित है परंतु इस ग्रंथ में उन सभी विषयों से सम्बद्ध तत्व प्राप्त हो जाते हैं जिनका सम्बन्ध नाट्य से है। इसी क्रम में इस ग्रंथ में संगीत विषय का भी व्यवहार हुआ है। नाट्यशास्त्र में संगीत के लिए गान्धर्व संज्ञा प्राप्त होती है। इस ग्रंथ में भरत मुनि ने उतने संगीत का ही उल्लेख किया है जितना नाट्य में प्रयुक्त हो सके, ऐसा स्वयं भरत मुनि का कथन है।

नाट्यशास्त्र ग्रंथ में संगीत के सात स्वरों, बाईस श्रुतियों, दो ग्राम–षड्ज व मध्यम, चौदह मूर्च्छनाओं, सात ग्रामरागों, तीन प्रकार की जातियों, पदाश्रिता गीतियों, ध्रुवा गीतियों, आचार्य व शिष्य के गुणावगुण, गायक के गुणावगुण, आदि अनेक सांगीतिक तत्वों पर विस्तृत चर्चा प्राप्त होती है। भारतीय संगीत का यह प्रथम ज्ञात ग्रंथ है जिसमें भरत मुनि ने चतुःसारणा विधि की सहायता से एक सप्तक में 22 श्रुतियों की स्थिति सिद्ध की है। इस ग्रंथ के 6 व 7 अध्याय में रस के विषय में भी विस्तृत चर्चा प्राप्त होती है। नाट्यशास्त्र में आठ रस ही माने गए हैं। भरत मुनि ने शांत रस को रस नहीं माना है। इस ग्रंथ में भरत मुनि ने अनेक पूर्ववर्ती व अपने समकालीन संगीताचार्यों के नामोल्लेख भी किया है जैसे–ब्रह्मा, शिव, सरस्वती, पार्वती, शंकर, तुबरु, कोहल, शार्दूल आदि। यद्यपि यह ग्रंथ मूल रूप से नाट्य पर आधारित है परंतु इस ग्रंथ में सर्वप्रथम संगीत के तत्वों पर विस्तृत चर्चा प्राप्त होती है इसलिए संगीत के विद्यार्थियों के लिए यह ग्रंथ बहुत महत्वपूर्ण हो जाता है।

<u>मतंग मुनि कृत बृहद्देशी</u> – बृहद्देशी संगीत पर आधारित महत्वपूर्ण ग्रन्थ है। इस ग्रंथ की रचना मतंग मुनि द्वारा छठी शताब्दी ईसवी में की गई। इस ग्रंथ में मूल रूप से पांच अध्याय हैं परंतु आधुनिक काल में यह ग्रंथ खण्डित अवस्था में प्राप्त होता है। वर्तमान समय में इस ग्रंथ के ध्वनि, स्वरादि, राग तथा प्रबंध से संबंधित, मात्र तीन अध्याय ही प्राप्त हैं। इस ग्रंथ के ताल तथा वाद्य संगीत से सम्बंधित अध्याय प्राप्त नहीं हैं। माना जाता है कि 14वीं शताब्दी में संगीतराज ग्रंथ के रचयिता महाराणा कुम्भ को बृहद्देशी ग्रंथ का वाद्याध्याय प्राप्त था। ईसवी की आरम्भिक शताब्दियों में रचित सांगीतिक ग्रंथों में भरत मुनि कृत नाट्यशास्त्र के पश्चात् यह एक अतिमहत्वपूर्ण ग्रंथ है। इस ग्रंथ में ही सर्वप्रथम अनेक सांगीतिक संज्ञाओं की शब्द व्युत्पत्ति व उनकी व्याख्या प्रस्तुत की गई है जिन्हें आधुनिक काल तक सभी विद्वान यथावत् स्वीकार करते हैं।

मतंग मुनि ने इस ग्रंथ के प्रारम्भ में देशी ध्वनि, उसके लक्षण, उसके भेद आदि का वर्णन किया है। इस ग्रंथ में वर्णित अन्य प्रमुख विषय हैं–नाद, नादोत्पत्ति, श्रुति, स्वर, ग्राम, मूर्छना, तान, मूर्छना–तान, वर्ण, अलंकार, पद–गीति, स्वर–गीतियां, जाति, राग, राग लक्षण, राग भेद, भाषा व प्रबंध। इस ग्रंथ में अनेक प्राचीन संगीत मनीषियों के नाम व उनके सांगीतिक मतों के भी वर्णन प्राप्त होते हैं, जैसे काश्यप,

कोहल, दत्तिल, दूर्गशक्ति, नन्दिकेश्वर, नारद, ब्रह्मा, भरत, महेश्वर, याष्टिक, वल्लभ, विश्वावसु, शार्दूल आदि।

इस ग्रंथ की प्रमुख विशेषताओं में एक, *राग* शब्द का प्रयोग व व्यवहार है। वर्तमान ज्ञात ग्रंथों में यह प्रथम ग्रंथ है जिसमें राग के विवरण, व्याख्या व व्यवहार के उल्लेख प्राप्त होते हैं। राग की यही व्याख्या आधुनिक काल तक इसी प्रकार स्वीकार की गई है। इसके अतिरिक्त भारतीय संगीत का यह एक मात्र ग्रंथ है जिसमें बारह स्वरों की मूर्च्छनाएं भी बताई गई हैं। मतंग मुनि के इस मत को भारतीय संगीत में द्वादश–स्वर मूर्छनावाद कहा जाता है। परंतु यह मत प्रचलित नहीं हो पाया। इस ग्रंथ में सर्वप्रथम षड्ज व मध्यम दोनों ग्रामों के श्रुति–मण्डल, स्वर–मण्डल तथा मूर्च्छना–मण्डल भी दिए गए हैं। इस ग्रंथ में ही सर्वप्रथम सात सांगीतिक स्वरों के गेय रूप–सा, रि, गा, म, प, ध तथा नि भी प्राप्त होते हैं। अतः बृहद्देशी ग्रंथ संगीत के विद्यार्थियों के लिए एक महत्वपूर्ण ग्रंथ है।

अभ्यास प्रश्न

1. भरत मुनि के वाद्य वर्गीकरण को उदाहरण सहित समझाइए।
2. ताल पर टिप्पणी कीजिए।
3. बृहद्देशी ग्रंथ पर संक्षिप्त टिप्पणी कीजिए।
4. वैदिक कालीन संगीत पर चर्चा कीजिए ।

1.5 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप भारतीय संगीत के इतिहास (प्राचीनकाल से मध्यकाल तक) के विषय में जान चुके होंगे। प्रागऐतिहासिक काल से ही भारतीय संगीत के विकास के प्रमाण प्राप्त होने लगते हैं। परंतु इस काल खण्ड में साम या सामगान को संगीत का पर्याय माना गया है। इसी काल में भारतीय संगीत में एक से दो, दो से तीन, तीन से चार व इसी क्रम में सात स्वरों तक सप्तक के विकास के प्रमाण वेदों में प्राप्त हो जाते हैं। परंतु वेदों में संगीत के अन्य तत्वों–नाद, श्रुति, सप्तक, ग्राम, मूर्छना आदि का कोई वर्णन प्राप्त नहीं होता। वेदों के पश्चात् रामायण व महाभारत महाकाव्यों में भी नाद, श्रुति व सप्तक का वर्णन नहीं किया गया है परंतु वहां ग्राम, मूर्छना व ग्रामरागों से सम्बंधित विवरण प्राप्त हो जाते हैं। इससे ज्ञात होता है कि तत्कालीन समाज को श्रुति का भान था परंतु रामायण व महाभारत ग्रंथ मानवीय चरित्रों पर आधारित हैं इसलिए इनमें सांगीतिक तत्वों पर विशद् चर्चा नहीं की गई है।

प्रागऐतिहासिक काल के ग्रंथों के उल्लेखों से तत्कालीन संगीत विशेषज्ञ विभूतियों के विषय में भी ज्ञात होता है। इस सम्पूर्ण काल खण्ड में गंधर्वों, अप्सराओं तथा किन्नरों के वर्णन प्राप्त होते हैं। ये सभी संगीत जीवी समुदाय के अंग थे। संगीत विद्या को गन्धर्वों की विद्या कहा गया है। इसीलिए प्रागऐतिहासिक काल में संगीत को गान्धर्व भी कहा गया है। आर्यों के अनेक प्राचीन ग्रंथों में वर्णित है कि भगवान ब्रह्मा ने संगीत के सप्त स्वरों की सृजना की। कालान्तर में इन्हीं सप्त स्वरों के आधार पर भगवान शिव ने अपने पांच मुखों से पांच रागों की तथा भगवती पार्वती ने एक राग की उत्पत्ति की। इस प्रकार प्रारम्भ में संगीत छः राग उत्पन्न हुए। इस काल के ग्रंथों में वर्णित है कि भगवती सरस्वती तथा नारद मुनि ने भगवान शिव से संगीत की शिक्षा प्राप्त की। तत्पश्चात् भगवान शिव से आज्ञा प्राप्त कर ऋषि नारद ने संगीत की शिक्षा गन्धर्वों को दी। इन्हीं गन्धर्वों में से एक गंधर्व नारद ने मानव जाति के हित के लिए इस विद्या का प्रचार–प्रसार मत्यु लोक अर्थात् पृथ्वी पर किया। इस प्रकार संगीत के आदि गुरु भगवान शिव माने जाते हैं तथा नारद मृत्यु लोक में संगीत के प्रथम आचार्य माने गए हैं। इसी प्रकार भगवती सरस्वती को संगीत व विद्या की अधिष्ठात्री देवी माना जाता है। प्राचीन भारतीय संगीत के दैवीय संगीतज्ञों में तुम्बरु व विश्वावसु नामक गंधर्वों का नाम भी श्रद्धा से लिया गया है। इनके अतिरिक्त महाकाव्य काल के संगीतज्ञों में रावण, हनुमान, लव–कुश, कृष्ण व अर्जुन का नाम भी विशेष उल्लेखनीय हैं।

प्रागऐतिहासिक काल के ग्रंथों में अनेक प्रकार के वाद्यों के वर्णन भी प्राप्त होते हैं। इनमें से ताल वाद्यों में आदिम वाद्य भूमि दुंदुभि को माना गया है। ताल वाद्यों में विभिन्न प्रकार के पुष्कर वाद्य, पणव वाद्य तथा विभिन्न प्रकार की दुंदुभियों के वर्णन इस काल के ग्रंथों में प्राप्त होते हैं। तंतु वाद्यों में बाण नामक वाद्य सर्वाधिक प्राचीन वाद्य है। बाद में प्रचलित हुए सभी प्रकार के तंतु वाद्यों को बाण नामक वाद्य से ही प्रेरित मानकर वीणा कहा गया। प्रागऐतिहासिक काल में अनेक प्रकार की वीणाएं प्रचलित थीं, उदाहरणार्थ– एकतंत्री, विपंची, मत्तकोकिला, महती, तुबरु आदि। इस काल में शंख व वेणु वाद्यों के भी उल्लेख प्राप्त होते हैं। प्रागऐतिहासिक काल के नृत्त प्रकारों में तांडव, लास्य, रास, हल्लीसक आदि प्रमुख रहे हैं। सांगीतिक उद्धरणों के दृष्टिकोण से ऐतिहासिक काल, प्रागऐतिहासिक काल की तुलना में समृद्ध दिखता है। इस काल में स्पष्ट रूप से संगीत पर ही आधारित ग्रंथों की रचना प्रारम्भ हो चुकी थी। इस काल में समस्त सांगीतिक तत्वों के उल्लेख व व्याख्या प्राप्त हो जाती है। यह युग संगीत के लिए निर्णायक युग कहा जा सकता है क्योंकि इस युग में सांगीतिक तत्वों की जो व्याख्याएं प्रस्तुत की गईं वही व्याख्याएं आधुनिक काल में भी स्वीकारी गई हैं। यहां तक कि ऐतिहासिक युग के प्राचीन व मध्य काल में भारतीय संगीत का जो विकास हुआ, आधुनिक काल में सूक्ष्म परिवर्तन के साथ ही वह विद्यमान है।

प्राचीन व मध्य काल भारतीय संगीत के दृष्टिकोण से स्वर्णिम युग है। इस युग में जहां पं0 शार्ङ्गदेव, पं0 अहोबल, रामामात्य, पं0 व्यंकटमुखी, पं0 लोचन, पं0 सोमनाथ, महाराण कुम्भा, महाराजा मानसिंह तोमर, आदि जैसे अनेक अति उच्च कोटि के सांगीतिक शास्त्रकार हुए वहीं इसी युग में नायक गोपाल, स्वामी हरिदास, बैजू बावरा, महारानी गुर्जरी, तानसेन, गोपाल लाल, त्यागराजा, स्वाति तिरुनल, श्यामा शास्त्री, सूरदास, मीराबाई, मुत्थुस्वामी दीक्षितर, पुरंदरदास, आदि जैसे अनेक उत्कृष्ट संगीतज्ञ हुए हैं। भारतीय संगीत की प्रसिद्ध गीत शैलियां प्रबन्ध, ध्रुवपद, धमार, ख्याल, चतुरंग, तराना, सादरा आदि भी इसी युग की देन हैं। विश्व प्रसिद्ध भारतीय ताल वाद्य तबला तथा तंतु वाद्य सितार भी तथा विश्व प्रसिद्ध भरतनाट्यम्, कथकली व कथक नृत्य भी इसी युग की देन हैं।

1.6 शब्दावली

1. बंदिश – सांगीतिक भाषा में गीत को बंदिश कहा जाता है। यह सांगीतिक रचना में प्रयुक्त होने वाला कवित्त भाग ही है परंतु यह स्वरमय होता है। संगीत में गीत शैलियों के आधार पर अनेक प्रकार की बंदिशें होती हैं, जैसे– ध्रुवपद, धमार, ख्याल, तराना, ठुमरी, भजन, गज़ल, आदि की बंदिश।

2. सप्तक – सात स्वरों का समूह सप्तक कहलाता है। इस समूह में सात स्वर क्रमपूर्वक नियोजित किए जाते हैं, यथा – सा रे गा म प ध नि। भारतीय संगीत में तीन सप्तक स्वीकार किए गए हैं–तार सप्तक, मध्य सप्तक तथा मन्द्र सप्तक। तार सप्तक मध्य सप्तक से दोगुना ऊंचे स्थान पर स्थित होता है। इसी प्रकार मध्य सप्तक मन्द्र सप्तक से ऊंचे स्थान पर स्थित होता है।

3. अष्टक – सात स्वरों में तार सप्तक का प्रथम स्वर सम्मिलित करके उनकी संख्या आठ मान ली जाती है। इस प्रकार का सप्तक, अष्टक कहलाता है। प्रायोगिक संगीत में सप्तक इसी रूप में प्रस्तुत किया जाता है– सा रे गा म प ध नि सां।

4. नायक – प्राचीन परम्पराओं में प्रचलित बंदिशों को बिना किसी बदलाव के प्रस्तुत करने वाला कलाकार नायक कहलाता है। नायक, अपने कला कौशल पर नियंत्रण रखते हुए गुरु–शिष्य परंपरा से सीखी बंदिशों को यथावत् प्रस्तुत करने वाला कलाकार होता है।

5. गायक – गुरु–शिष्य परंपरा से सीखी बंदिशों व गायन शैली को, अपने कला–कौशल से पुष्ट कर व सजा कर प्रस्तुत करने वाला कलाकार गायक कहलाता है। गायक सृजनात्मक शक्ति का धनी होता है। अनेक अवसरों पर वह अपने पूर्वाचार्यों से श्रेष्ठ सिद्ध होता है।

6. वाग्गेयकार – वाग्गेयकार ऐसा कलाकार है जिसने शब्द रचना व सांगीतिक स्वर रचना दोनों में दक्षता प्राप्त की हो। तात्पर्य यह कि ऐसा कलाकार जो बंदिश के कवित्त भाग की रचना करने, उसे किसी राग के स्वरों में निबद्ध करने तथा उन्हें गाने की भी क्षमता रखता है, वह वाग्गेयकार कहलाता है।
7. सम – प्रत्येक ताल की प्रथम मात्रा सम कहलाती है। इसे ताली द्वारा प्रदर्शित किया जाता है।
8. खाली व ताली – जिस ताल में अधिक विभाग होते हैं उसके विभागों को पहचानने के लिए, कुछ विभागों को सशब्द क्रिया व कुछ को निःशब्द क्रिया द्वारा व्यक्त किया जाता है। जिन विभागों को निःशब्द क्रिया द्वारा व्यक्त किया जाता है वे खाली कहलाते हैं तथा जिन विभागों को सशब्द क्रिया द्वारा व्यक्त किया जाता है वे ताली द्वारा प्रदर्शित किए जाते हैं।
9. मुखड़ा – बंदिश या ताल में सम को प्रदिर्शित करने से पहले जिस भाग या टुकड़े का गायन या वादन किया जाता है वह मुखड़ा कहलाता है।
10. आलाप – राग के नियमों को ध्यान में रख कर उसके स्वरों का विलम्बित लय में गायन करना आलाप करना कहलाता है। इसे ही राग का स्वर–प्रस्तार या राग विस्तार भी कहते हैं। आलाप करते हुए राग के आरोह–अवरोह, न्सास के स्वर, वादी–संवादी स्वर, महत्वपूर्ण स्वर–संगतियों आदि राग सूचक स्वर समूहों का ध्यान रखा जाता है।
11. तान – राग के आरोह–अवरोह व स्वरूप को ध्यान में रख कर उसके स्वरों का मध्य लय या द्रुत लय में प्रस्तार करना तान करना कहलाता है।
12. मुर्की – किसी स्वर को आधार मानकर उसके आगे व पीछे के स्वरों को अतिद्रुत लय में मात्र छूकर मूल स्वर का गान करना, मुर्की कहलाता है।
13. खटका – किसी स्वर का गान करते हुए झटका देकर अगले स्वर का गान करना, खटका कहलाता है।
14. मींड – एक स्वर से दूसरे स्वर पर बिना स्वर भंग किए जाना या उच्चारित करना मींड कहलाता है।
15. आंदोलन – किसी स्वर को उत्पन्न करके उसके आगे व पीछे के स्वरों को धीर–गम्भीर लय में झुलाते हुए उच्चरित करना व मूल स्वर पर लौटना, आंदोलन कहलाता है।
16. जुगलबंदी या युगलबंदी – जब दो कलाकार मिलकर कोई सांगीतिक रचना प्रस्तुत करते हैं तब उनकी वह प्रस्तुति जुगलबंदी या युगलबंदी कहलाती है। आधुनिक कालीन भारतीय संगीत में गायन, वादन तथा नृत्य तीनों विधाओं में युगलबंदी की प्रथा प्रचलित है। यहां यह ध्यान रखना चाहिए कि संगीत की ऐसी प्रस्तुतियों में युगलबंदी कर रहे दोनों कलाकार मुख्य भूमिका का निर्वहन कर रहे होते हैं तथा उनके साथ मंच पर प्रस्तुति दे रहे कलाकार उनकी मात्र संगत करते हैं।
17. संगतकार – सांगीतिक प्रस्तुति में मंच पर आसीन मुख्य कलाकार का अनुसरण करने वाले अन्य कलाकार, संगतकर्ता कहलाते हैं।
18. वृन्द – वृन्द का शाब्दिक अर्थ है समूह। संगीत की सामूहिक प्रस्तुति को वृन्द कहा जाता है। यह तीन प्रकार का होता है–गान वृन्द, वाद्य वृन्द व नृत्त वृन्द। जब दो से अधिक गायक एक साथ मिलकर गायन प्रस्तुत करते हैं वह गान वृन्द या वृन्दगान कहलाता है। जब दो से अधिक वाद्य वादक एक साथ मिलकर वादन प्रस्तुत करते हैं तब वह वाद्य वृन्द कहलाता है। भरत मुनि ने वाद्य वृन्द के लिए ही कुतुप संज्ञा दी है। जब दो से अधिक नर्तक एक साथ मिलकर नर्तन प्रस्तुत करते हैं तब वह नृत्त वृन्द कहलाता है।

1.7 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. परांजपे, डा0 शरच्चन्द्र श्रीधर, 1994, भारतीय संगीत का इतिहास, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी।
2. सिंह, डॉ0 ठाकुर जयदेव, 1994, भारतीय संगीत का इतिहास, संगीत रिसर्च एकेडेमी, कलकत्ता।
3. डंगवाल, मनीष, 2005, नारदीय शिक्षा में संगीत, राज पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली।
4. शर्मा, भगवत शरण, 1988, संगीत ग्रंथ सार, सखि प्रकाशन, गोटावाला कोठी, हाथरस।
5. वसंत, 2007, संगीत विशारद, संगीत कार्यालय, हाथरस।
6. भातखण्डे, पं0 विष्णुनारायण, 1982,संगीत–पद्धतियों का तुलनात्मक अध्ययन, संगीत कार्यालय, हाथरस।

7. शास्त्री, बाबूलाल शुक्ल(अनु0),2000, श्रीभरतमुनिप्रणीत नाट्यशास्त्र, चौखम्भा संस्कृत संस्थान, वाराणसी।
8. गोवर्धन, शान्ति, 1993 व 2007, संगीत शास्त्र दर्पण, पाठक पब्लिकेशन, इलाहाबाद।
9. Sastri, ed. S. Subrahmanya, 1992, Samgitaratnakara of Sarngadeva, The Adyar Library and Research Centre, Madras.
10. Sharma, ed. Prem Lata, 1992, Brhaddesi of Sri Matanga Muni, Indira Gandhi National Centre for The Arts, New Delhi.
11. Nagar, ed. R. S., 2009, Natyasastra of Bharatmuni, Parimal Publications, Delhi.
12. Kavi, ed. M. Ramakrishna, 1980, Natyasastra of Bharatamuni, Oriental Institute, Baroda.

1.8 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. परांजपे, शरच्चंद्र श्रीधर, संगीत बोध, म0प्र0 हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल।
2. बृहस्पति, कैलाश चन्द्रदेव, भरत का संगीत सिद्धांत, उ0प्र0 हिन्दी संस्थान, लखनऊ।
3. विजयलक्ष्मी, डॉ0 एम0, संगीत निबन्धमाला, संजय प्रकाशन, नई दिल्ली।
4. भातखण्डे, पं0 वि0डी0, कमिक पुस्तक मालिका भाग 1 से 6, संगीत कार्यालय, हाथरस।
5. ठाकुर, पं0 ओंकारनाथ, संगीतांजलि भाग 1 से 6, प्रणव स्मृति न्यास, वाराणसी।

1.9 निबंधात्मक प्रश्न

1. साम विकार क्या है, समझाइए।
2. रामायण कालीन या महाभारत कालीन संगीत पर टिप्पणी कीजिए।
3. नारदीय शिक्षा या नाट्यशास्त्र में वर्णित संगीत पर निबंध लिखिए।
4. मतंग मुनि अथवा पं0 शार्ङ्गदेव के भारतीय संगीत में योगदान पर टिप्पणी कीजिए।

इकाई 2 – देहली, अजराडा, लखनऊ, बनारस, पंजाब व फर्रूखाबाद घरानों का विस्तृत अध्ययन

2.1 प्रस्तावना
2.2 उद्देश्य
2.3 तबले के घराने
   2.3.1 लखनऊ घराना
      2.3.1.1 लखनऊ घराने की वादन शैली अथवा बाज
   2.3.2 बनारस घराना
      2.3.1.2 बनारस घराने की वादन शैली अथवा बाज
   2.3.3 फर्रुखाबाद घराना
      2.3.1.3 फर्रुखाबाद घराने की वादन शैली अथवा बाज
2.4 तबले की वादन शैलियों का तुलनात्मक अध्ययन
2.5 लखनऊ, बनारस एवं फरूक्खाबाद घराने के प्रमुख तबला वादकों का योगदान
   2.5.1 उस्ताद आफाक हुसैन
   2.5.2 पंडित गुदई महाराज
   2.5.3 उस्ताद अमीर हुसैन खॉ
2.6 सारांश
2.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
2.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
2.9 निबन्धात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0 संगीत के पाठयक्रम(बी0ए0एम0टी0(एन)—202) की दूसरी इकाई है। इससे पहले की इकाईयों में आप भारतीय संगीत के इतिहास (प्राचीन काल) के विषय में जान गए होंगे।

इस इकाई में तबले के लखनऊ, बनारस एवं फरूक्खाबाद घरानों का विस्तृत अध्ययन प्रस्तुत है। प्रत्येक घराने की अपनी वादन शैली है जिसको बाज कहा जाता है। आप लखनऊ, बनारस एवं फरूक्खाबाद बाज का अध्ययन इस इकाई में करेंगे।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप तबला के लखनऊ, बनारस एवं फरूक्खाबाद घरानों से भली–भांति परिचित हो सकेंगे एवं इन घरानों की परम्परा एवं वादन शैली को भी समझ सकेंगे।

2.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप :—

- तबले के लखनऊ, बनारस एवं फरूक्खाबाद घरानो के विषय में जानेंगे।
- तबले के लखनऊ, बनारस एवं फरूक्खाबाद की वादन शैली एवं उनके तुलनात्मक अध्ययन के माध्यम से प्रत्येक बाज की उपयोगिता समझ सकेंगे।
- अपने लिए वादन शैली का चयन कर पाएंगे।

2.3 तबले के घराने

तबला वाद्य, पखावज वाद्य के बाद अस्तित्व में आया। भवानी दास अथवा भवानी सिंह अथवा भवानीदीन के शिष्य पंजाब के ताज खाँ डेरेदार कादिर बख्श (प्रथम) एवं हद्दू खाँ ने पखावज के पंजाब घराने की नींव डाली एवं कादिर बख्श के पौत्र मियां फकीर बख्श ने पंजाब के लोक वाद्य दुक्कड की वादन शैली के साथ मिलाकर तबले के पंजाब घराने की स्थापना की। अतः पंजाब में तबला वादन शैली का मुख्य आधार पखावज वादन शैली एवं दुक्कड की वादन शैली है। सिद्धार खाँ जिनको तबला वादन शैली का जन्मदाता माना जाता है वे भावानी दास के समकालीन थे। अतः तबला की वादन शैली पंजाब से पहले सिद्धार खाँ द्वारा स्थापित की गई थी। यद्यपि पंजाब के तबले की वादन शैली पर सिद्धार खाँ की वादन शैली का प्रभाव नहीं देखा जाता है। उस्ताद सिद्धार खां के वंशजों एवं शिष्यों के द्वारा तबला वादन शैली में विकास किया गया जिससे वर्तमान में प्रचलित तबले के घराने दिल्ली, अजराडा, लखनऊ, फर्रुक्खाबाद एवं बनारस घराने अस्तित्व में आए। पंजाब घराने का इनसे स्वतंत्र अस्तित्व है। निम्न तालिका से आप भिन्न–भिन्न घराने की स्थापना के विषय में समझेंगे।

इस प्रकार आज उत्तर भारतीय संगीत में तबले के मुख्य छः घराने प्रसिद्ध हैं।

उ0 सिद्धार खाँ ढाढ़ी

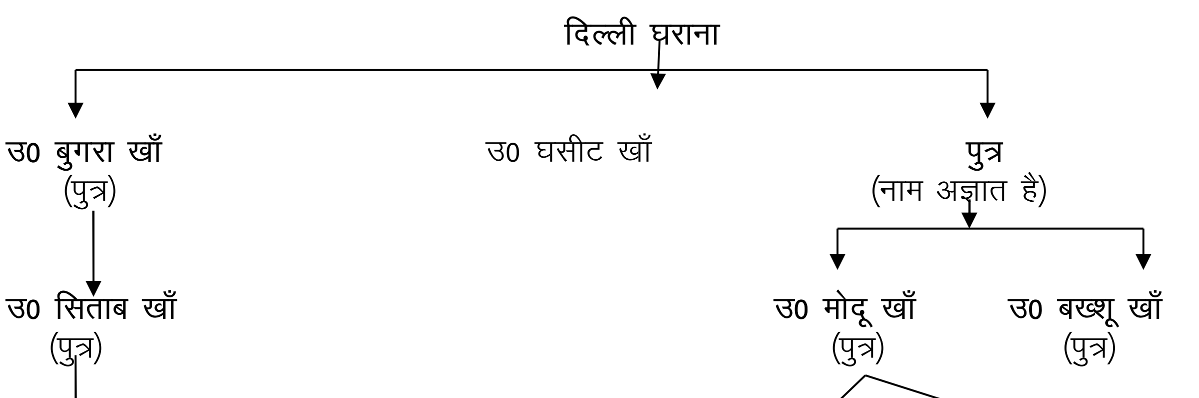

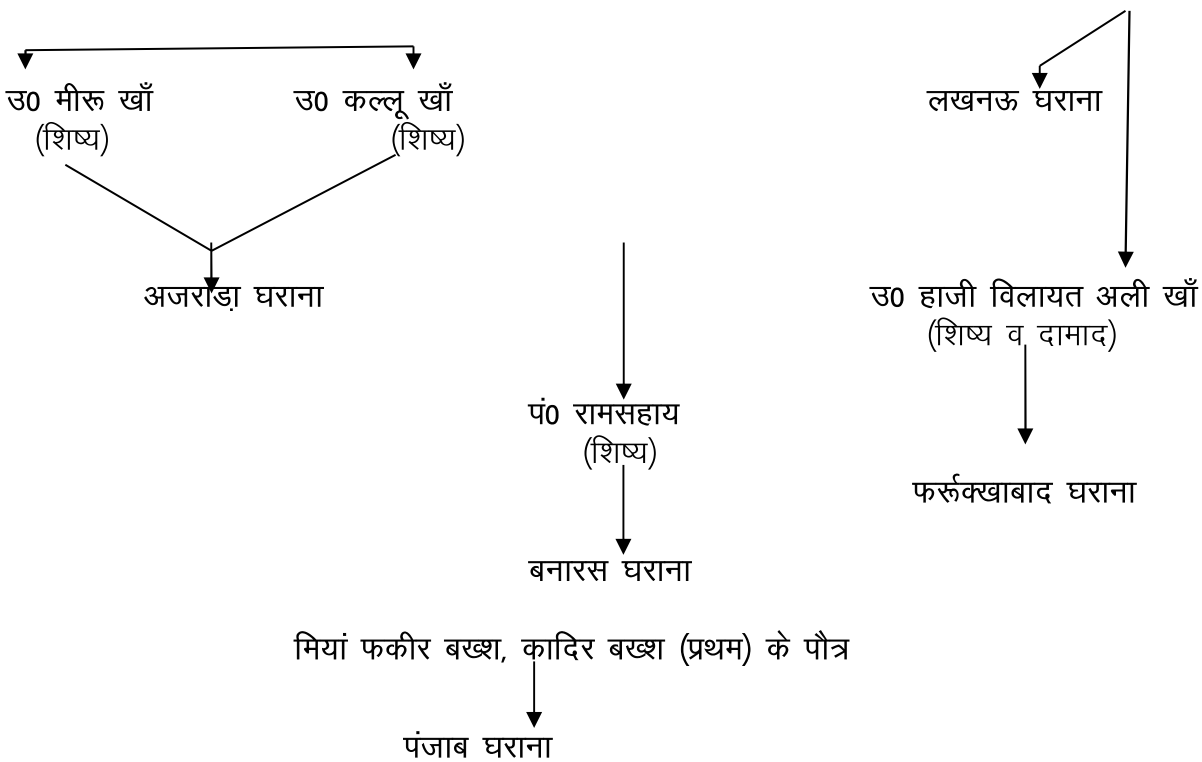

इस प्रकार सिताब खाँ के पुत्र बुगरा खाँ एवं गुलाब खाँ से देहली घराना, सिताब खाँ के दो शिष्य मीरु खाँ एवं कल्लू खाँ से अजराडा घराना, मोदू खाँ एवं बख्शू खाँ से लखनऊ घराना, बख्शू खाँ के दामाद हाजी विलायत अली से फर्रुक्खाबाद घराना, मोदू खाँ के शिष्य पं0 राम सहाय से बनारस घराने की स्थापना हुई। मियां फकीर बख्श ने पंजाब घराने की नींव डाली।

<u>2.3.1 लखनऊ घराना</u> – लखनऊ घराने के संस्थापक उ0 सिद्दार खाँ के पौत्र मोदू खाँ एवं बख्शू खाँ थे। लखनऊ के नवाब के बुलाने पर मोदू खाँ लखनऊ आ गए एवं बाद में इनके छोटे भाई बख्शू खाँ भी लखनऊ आ गए। लखनऊ की संगीत की आवश्यकता के अनुसार मोदू खाँ ने देहली के बाज में परिवर्तन किया एवं देहली बाज से हटकर एक नवीन तबला वादन शैली का निर्माण किया। मोदू खाँ के एक पुत्र जाहिद खाँ थे जिनको मोदू खाँ ने तैयार किया था परन्तु वे अधिक समय तक जीवित नहीं रहे, अतः लखनऊ घराने की परम्परा उनके छोटे भाई बख्शू खाँ के पुत्र मम्मन खॉ(मम्मू खॉ) से आगे चली। मम्मन खाँ ने अधिक शिक्षा मोदू खाँ से ही प्राप्त की थी। मम्मन खाँ के पुत्र मोहम्मद खाँ हुए। मोहम्मद खाँ के दो पुत्र बड़े मुन्ने खाँ एवं आबिद हुसैन एवं शिष्य वाहिद हुसैन थे। लखनऊ घराने की परम्परा मुख्य रूप से आबिद हुसैन से ही चली। आबिद हुसैन के कई शिष्य हुए जिनमें प्रमुख इनके दामाद एवं भतीजे वाजिद हुसैन, हिरेन्द्र किशोर राय चौधरी, जहॉगीर खाँ (इन्दौर), अजीम बख्श एवं बनारस के बीरू मिश्र आदि थे। इन शिष्यों के माध्यम से लखनऊ घराने का प्रसार हुआ। वाजिद हुसैन के पुत्र आफाक हुसैन श्रेष्ठ तबला वादक हुए। वर्तमान में इनके पुत्र इलमास खाँ इस घराने का प्रतिनिधित्व कर रहे हैं। अजीम बख्श के पुत्र निजामुद्दीन हुए जिन्होंने लखनऊ बाज की लग्गी–लड़ी बजाने में विशेष ख्याति अर्जित की। जहांगीर खाँ की शिष्य परम्परा बहुत अधिक है इनके प्रमुख शिष्यों में महबूब खाँ मिरजकर, इस्माइल ददू, अब्दुल हाफिज एवं शेख दाउद हैं। लखनऊ घराने के मोदू खाँ से शिक्षा प्राप्त पं0 रामसहाय ने बनारस घराने की स्थापना की एवं बख्शू खाँ के दामाद हाजी विलायत अली के द्वारा फर्रुखाबाद घरानें की नींव पड़ी।

लखनऊ घराना

। मोदू खाँ	। बख्शू खाँ । मम्मन खाँ (मम्मू खाँ)(पुत्र) । मोहम्मद खाँ(पुत्र)

मोहम्मद खाँ

मुन्ने खाँ(पुत्र)	वाहिद खाँ	आबिद हुसैन(पुत्र)

आबिद हुसैन

वाजिद हुसैन (दामाद एवं भतीजा) । आफाक हुसैन(पुत्र) । इलमास खाँ(पुत्र)	हिरेन्द किशोर राय चौधरी	अजीम बख्श । निजामुद्दीन(पुत्र)	जहागीर खाँ(इन्दौर)

जहागीर खाँ (इन्दौर)

अब्दुल हाफिज उदयपुर	इस्माल ददू	महबूब खाँ मिरजकर	शेख दाउद

<u>2.3.1.1 लखनऊ घराने की वादन शैली अथवा बाज</u> – लखनऊ बाज देहली बाज की अपेक्षा खुला एवं जोरदार है। लखनऊ बाज का विकास लखनऊ के नवाब वाजिद अली शाह के समय में हुआ जिस समय लखनऊ में नृत्य का प्रचार था एवं ठुमरी व दादरा गायन भी प्रचलित था। मोदू खाँ से पूर्व लखनऊ में भी पखावज का ही प्रयोग नृत्य के साथ हो रहा था। परन्तु नृत्य में ठुमरी भाव एवं स्वतन्त्र ठुमरी गायन के साथ पखावज की संगत उपयुक्त नहीं लग रही थी। ऐसे समय में मोदू खाँ ने नृत्य एवं ठुमरी के साथ संगत करने योग्य शैली का निर्माण किया जिससे लखनऊ का बाज खुला हो गया। स्याही पर हाथ के पंजे का प्रयोग होने लगा एवं किनार की अपेक्षा लव का स्थान अधिक होने लगा। तिर के कायदों में 'ति' वर्ण तर्जनी से एवं 'ट' वर्ण मध्यमा एवं कनिष्ठा को जोड़कर आघात करने से निकाला गया, जो कि देहली बाज की विकास विधि के अनुसार विपरीत था। ठुमरी के साथ लग्गी एवं लड़ी के बजाने हेतु बोलों का निर्माण किया। इस बाज में कायदों की अपेक्षा, रेले, गत, गत–कायदा, टुकड़े, परन एवं चक्करदार बोलों की रचना की गई। इस बाज के वादक नृत्य की कुशलतापूर्वक संगत करते थे एवं इस बाज को नचकरन बाज भी कहा गया। इस बाज में धिट–धिट, धागे तिट, ताके तिट, धिक, क–धाड़न, धाड़न, तकिट, धिरकिट तक घिरघिर किटतक, धिनगिन, धिनतक, तकधिन, धेतिरकिटतक, धिड़नग, आदि बोलों का प्रयोग अधिक होता है। लखनऊ बाज का परिचय निम्न उदाहरणों से स्पष्ट हो जाएगा।

<u>कायदा – 01</u>

धागेतिट धागेतिरकिट धिनागिन धागेतिट । धागेनधा तिरकिटधिन धागेतिरकिट तिनाकिन।
x 2
ताकेतिट ताकेतिरकिट तिनाकिन ताकेतिट । धागेनधा तिरकिटधिन धागेतिरकिट धिनागिन। धा
0 3 x

गत कायदा

तकिटधा घेतिरकिरतक धिरधिरकिटतक तकिटधा ।
x
धिरधिरकिटतक धातिरकिटतक धिरधिरकिटतक तकिटधा ।
2
तकिटधा घेतिरकिरतक धिरधिरकिटतक तकिटधा ।
0
घिरघिरकिटतक धातिरकिटतक धिरधिरकिटतक तकिटधा । धा
3 x

गत

धिरधिकिटतकतकिटघा –तकधिरधिरकिटतक धातिरकिटतकदिगिनना–न –नगननातिरकिटतक।
धिरधिकिटतकतकिटघा –तकधिरधिरकिटतक धातिरकिटतकघिरघिरकत –घिरघिरकतघिरघिर। धा

टुकडा

घेतिरकिटतक ता कतघेघे दीं । नगघे– –ता घेतरा– –नधा–।
x 2
धिंता कति टघेतिर किटतकतकिट । घाघेतिर किटतकतकिट धाघेतिर किटतकतकिट।
0 3
धा– कति टघेतिर किटतकतकिट । धाघेतिर किटतकतकिट धाघेतिर किटतकतकिट।
x 2
धा– कति टघेतिर किटतकतकिट । धाघेतिर किटतकतकिट धाघेतिर किटतकतकिट। धा
0 3 x

इस टुकडे का प्रयोग नृत्यकारों ने भी किया है।

2.3.2 बनारस घराना – बनारस घराने की स्थापना लखनऊ घराने के मोदू खाँ के शिष्य राम सहाय के द्वारा की गई, अतः बनारस घराना भी लखनऊ घराने की देन है। मोदू खाँ की पत्नी पंजाब घराने के पखावज वादक की पुत्री थी, अतः राम सहाय को पंजाब घरानें की रचनाएं भी प्राप्त हुई थी जिससे बनारस घराने की वादन शैली में पखावज वादन शैली का प्रभाव दिखता है। राम सहाय के शिष्य जानकी सहाय, भाई एवं भतीजे थे जिन्होंने राम सहाय से तबले की शिक्षा प्राप्त की थी। इसके अतिरिक्त इनके शिष्य बैजू महाराज, रामशरण, भगत जी, प्रताप महाराज उर्फ परतप्पू जी थे जिनकी वंश एवं शिष्य परम्परा से बनारस घराने का विकास हुआ। जानकी सहाय के दो शिष्य गोकुल एवं

विश्वनाथ थे। विश्वनाथ के शिष्य भगवान प्रसाद एवं पुत्र बीरु मिश्र हुए। बीरु मिश्र ने अपने समय में तबला वादन में बहुत ख्याति प्राप्त की।

भैरो सहाय के शिष्य बलदेव सहाय थे। बलदेव सहाय के शिष्यों में बीक्कू जी, भगवती सहाय, कंठे महाराज एवं पुत्र दुर्गा सहाय उर्फ नन्दू सूरदास थे। इन सभी शिष्यों की अपनी शिष्य परम्परा थी। बिक्कू जी के पुत्र गामा जी एवं इनके पुत्र रंगनाथ मिश्र थे। रंगनाथ मिश्र ने बहुत समय तक लखनऊ के मेरिस कालेज, वर्तमान भातखण्डे संगीत संस्थान, लखनऊ में अपनी सेवाएं दी एवं अनेक शिष्य तैयार किए। भगवती सहाय की शिष्य परम्परा में इनके पुत्र शारदा सहाय एवं शिष्य मंगल सहाय एवं राम शंकर सहाय थे। कंठे महाराज ने अपने भतीजे किशन महाराज को दत्तक पुत्र स्वीकार किया था एवं किशन महाराज को तबला वादन में निपुण किया। कंठे महाराज के शिष्य शीतल प्रसाद मिश्र हैं जो भातखण्डे संगीत संस्थान से अवकाश प्राप्त हैं। किशन महाराज ने बनारस घराने की परम्परा का बहुत अधिक विकास किया। वर्तमान में इनके पुत्र पूरन महाराज एवं शिष्य कुमार बोस, सुखविन्दर नामधारी एवं तेज बहादुर निगम प्रख्यात तबला वादक हैं।

दुर्गासहाय उर्फ नन्दू सूरदास की परम्परा में श्याम लाल प्रसिद्ध तबला वादक थे। इनके प्रमुख शिष्य मधुकर गणेश गोडबोले एवं लालजी श्रीवास्तव ने इलाहाबाद एवं उसके आस पास के क्षेत्र में तबले का प्रचार–प्रसार किया। इनके प्रमुख शिष्यों में इनके पुत्र अजय किशोर एवं विपिन किशोर, गिरीश श्रीवास्तव, भुवन श्रीवास्तव, प्रभुदत्त बाजपेई एवं अनुपम राय हैं। भैरव प्रसाद भगत जी के प्रमुख शिष्य थे। भैरव प्रसाद के प्रमुख शिष्यों में अनोखे लाल, मौलवी मिश्र, महादेव मिश्र एवं महावीर भटट थे। अनोखे लाल अपने समय के बेजोड़ तबला वादक थे एवं इन्होंने कठिन परिश्रम से तीनताल का ठेका अति दुत गति में साधा था। इनको ना धिं धिं ना का जादूगर कहा जाता है। अनोखे लाल के पुत्र राम जी मिश्र में अपने पिता के सभी गुण थे। अनोखे लाल की शिष्य परम्परा के नागेश्वर प्रसाद मिश्र उर्फ पांचू महाराज, ईश्वर लाल, छोटे लाल मिश्र, महापुरुष मिश्र एवं काशी नाथ मिश्र की बनारस घराने के प्रतिष्ठित तबला वादको में गणना की जाती है। प्रताप महाराज उर्फ परतप्पूजी के पुत्र जगन्नाथ थे। जगन्नाथ के दो पुत्र शिव सुन्दर एवं बाचा मिश्र हुए। बाचा मिश्र के पुत्र सामता प्रसाद थे जो गुदई महाराज के नाम से प्रसिद्ध हुए। गुदई महाराज ने तबला एकल वादन, नृत्य, वाद्य की संगति में बहुत ख्याति अर्जित की एवं इनको फिल्मों में विशेष तबला वादन हेतु आमंत्रित किया गया था। इनके दो पुत्र कुमार लाल एवं कैलाश एवं प्रमुख शिष्य सत्यनारायण वशिष्ठ एवं जे मेंसी थे। गुदई महाराज के तबला वादन शैली से अन्य घरानों के कलाकार भी प्रभावित रहे। निम्न तालिका से बनारस घराने की परम्परा स्पष्ट होगी।

बनारस घराना

राम सहाय

जानकी सहाय (भाई)	भैरो सहाय (भतीजा)	बैजु महाराज	रामशरण	भगत जी	प्रताप महाराज (उर्फ परतप्पूजी)

जानकी सहाय

गोकुल(शिष्य)	विश्वनाथ

विश्वनाथ
|
भगवान प्रसाद(शिष्य)

बीरु मिश्र(पुत्र)

भैरो सहाय

बलदेव सहाय

बिक्कू जी | भगवती सहाय | कंठे महाराज | दुर्गा सहाय (पुत्र)

बिक्कू जी → गामा जी(पुत्र) → रंगनाथ मिश्र(पुत्र)

भगवती सहाय

शारदा सहाय(पुत्र) | मंगला सहाय | रामशंकर सहाय

कंठे महाराज

किशन महाराज(दत्तक पुत्र) | शीतल मिश्र(शिष्य)

किशन महाराज → पुरन महराज(पुत्र) | तेज बहादुर निगम | कुमार बोष | सुखविन्दर नामधारी

दुर्गा सहाय(उर्फ नन्दू सूरदास)

श्याम लाल(शिष्य)

मधुकर गणेश गोडबोले | लालजी श्रीवास्तव(इलाहाबाद)

लालजी श्रीवास्तव → विपिन किशोर (पुत्र) | अजय किशोर (पुत्र) | गिरीश श्रीवास्तव | भुवन श्रीवास्तव | प्रभु दत्त बजपाई

भगत जी

भैरव जी

अनोखे लाल (शिष्य) | मौलवी मिश्र (शिष्य) | महादेव मिश्र (शिष्य) | महावीर भटट (शिष्य)

रामजी मिश्र (पुत्र) | बागेश्वर मिश्र (शिष्य) | ईश्वरलाल (शिष्य) | छोटेलाल (शिष्य) | महापुरुषमिश्र (शिष्य) | काशीनाथ (शिष्य)

प्रताप महाराज उर्फ परतथूजी

|

जगन्नाथ(पुत्र)

|

शिवसुन्दर(पुत्र) | बाचा मिश्र(पुत्र)

|

सामता प्रसाद(पुत्र)

सामता प्रसाद

|

कुमार लाल(पुत्र) | कैलाश(पुत्र) | जे मेंसी | सत्यनारायण वशिष्ठ

<u>2.3.1.2 बनारस घराने की वादन शैली अथवा बाज</u> – बनारस घराने की वादन शैली अथवा बाज पर पखावज की वादन शैली का प्रभाव है। यह बाज खुला एवं जोरदार है। किनार की अपेक्षा लव का प्रयोग अधिक किया जाता है। इस बाज में कायदों का अधिक महत्व नहीं है। यद्यपि इस बाज में रचनाएं, कायदे की भांति भी हैं परन्तु इनका विकास बनारस बाज के अनुसार किया जाता है। चाले, बांट, परन, पडार, गत एवं फरद इस बाज की विशेषता है। पखावज की भांति लम्बी–लम्बी परन एवं पडार बनारस बाज में बहुत अधिक प्रयोग की जाती हैं। धिर धिर किटतक रेला भी बनारस बाज का मुख्य आकर्षण है। पखावज पर प्रयोग होने वाले बोल जैसे धेट धेट, कडधातिट, धेत धेक, कता–न धडा–न, तिरकता, गदिगिन बनारस बाज में प्रयोग किए जाते हैं। इसमें पेशकार का प्रयोग नहीं किया जाता है। तबला वादन का आरम्भ दो–तीन आवृति की उठान से किया जाता है। पेशकार के स्थान पर बोलों की बांट बजाते हैं। तीनताल में निम्न उदाहरणों से बनारस बाज का परिचय प्राप्त होगा।

<u>कायदा</u>

धीक	धिना	तिरकिट	धिना।	धागे	नधि	कति	नाना।	
x				**2**				
तीक	तिना	तिरकिट	तिना।	धागे	नधि	कधि	नाना।	धा
0				3				**x**

<u>चाल</u>

धा	– धि	कधि	नाती।	धाती	कधि	– ति	नाती।	
x				**2**				
ता	–ति	कति	नाती।	धाती	कधि	– धि	नाती।	धा
0				3				**x**

रेला

धातिर किटतक धिरधिर किटतक। धातिर किटतक तूना किटतक।
x 2
तातिर किटतक तिरतिर किटतक। धातिर किटतक धिना किटतक। धा
0 3 x

गत कायदा

धिरधिर धिरधिर घिडनग दिनतक । धातिर घिडनग धिरधिर घिडनग।
x 2
धिरधिर घिडनग दिनतक धिरधिर । घिडनग धातिर घिडनग तिनतक।
0 3
तिरतिर तिरतिर किडनक तिनतक। तातिर किडनक तिरतिर किडनक।
x 2
धिरधिर घिडनग दिनतक धिरधिर। घिडनग धातिर घिडनग दिनतक। धा
0 3 x

2.3.3 फर्रुक्खाबाद घराना – सिद्धार खाँ के पौत्र बख्शू खाँ जिन्होंने लखनऊ घराने की वादन शैली के विकास में अपना योगदान दिया था, ने अपकी लडकी की शादी फर्रुक्खाबाद के विलायत अली से की थी। विलायत अली ने लगभग पांच बार हज यात्रा की थी एवं आप धार्मिक एवं आध्यात्मिक प्रकृति के व्यक्ति थे। इसी कारण इनके नाम के आगे हाजी जुड गया एवं ये हाजी विलायत अली के नाम से प्रसिद्ध हुए। इनको दहेज में लखनऊ बाज का तबला भेंट में मिला था, जिसमें मुख्य रुप से गतें थी। इसी लखनऊ घराने से मिले तबले के आधार पर आपने एक नवीन शैली को जन्म दिया। इनकी वंश परम्परा एवं शिष्य परम्परा ने इस शैली का विकास किया जो कि फर्रुखाबाद घराने के नाम से स्थापित हुआ। हाजी विलायत अली के दो पुत्र निसार अली एवं हुसैन अली हुए जिन्होंने शिष्यों के माध्यम से फर्रुक्खाबाद घराने की परम्परा को आगे बढाया। इनके प्रमुख शिष्य मुनीर खाँ थे जिनके शिष्य अमीर हुसेन (भान्जे), गुलाम हुसैन, शमसुद्दीन खाँ, हबीबूद्दीन खाँ एवं अहमद जान थिरकवा ने तबला वादन में ख्याति प्राप्त की। अहमद जान थिरकवा को भारत सरकार द्वारा पदम भूषण से भी अलंकृत किया गया। अमीर हुसैन खाँ के प्रमुख शिष्यों में निखिल घोष, शेर खाँ (नागपुर), माणिक राव पसेपटकर एवं चांद खाँ हुए। अमीर हुसैन मुख्य रुप से बम्बई में रहे। वर्तमान में इनके पुत्र पाया खाँ इस परम्परा को आगे बढा रहे हैं। अहमद जान थिरकवा के नाम से ऐसा कोई विरला ही होगा जो कि परिचित न हो। इनकी वंश परम्परा में इनके छोटे भाई मोहम्मद जान, दामाद अहमद अली, भतीजा जमीर अहमद हुए एवं प्रमुख शिष्यों में प्रेम बल्लभ, रोजवेल लायल, निखिल घोष एवं अता हुसैन (रामपुर) हैं। मोहम्मद जान के पुत्र रशीद मुस्तफा वर्तमान में तबला वादन के क्षेत्र में प्रसिद्धि पा रहे हैं। अहमद जान थिरकवा के शिष्यों ने भी इस परम्परा को आगे बढाने में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया जिनमें मुख्य रुप से प्रेम बल्लभ एवं पं0 निखिल घोष हैं।

हाजी विलायत अली के दामाद हुसैन बख्श थे। इनकी परम्परा को अल्लादिया खाँ ने हैदराबाद में प्रचारित किया। इनके दो पुत्र मोहम्मद खाँ एवं छोटे खाँ ने हैदराबाद में शिष्य परम्परा को बढाया जिसमें शेख दाउद ने विशेष रुप से तबला वादन में ख्याति अर्जित की एवं शेख दाउद ने भी कई शिष्य तैयार किए।

करम इतल भी हाजी विलायत अली के प्रमुख शिष्यो में से थे। ये उत्तर प्रदेश के मुरादाबाद जिले में आकर बस गए थे। इनके पुत्र फैयाज खाँ ने इस क्षेत्र में फर्रुखाबाद घराने को स्थापित किया एवं इनसे अहमद जान थिरकवा, हबीबूदीन खाँ एवं अजीम बख्श ने शिक्षा प्राप्त की। हबीबूदीन खाँ बाद

में अजराडा घराने के प्रतिनिधि कलाकार के रुप में स्थापित हुए। अजीम बख्श के पुत्र निजामुद्दीन हुए।

नन्हें खाँ भी हाजी विलायत अली के प्रमुख शिष्यो में से थे। नन्हें खाँ के पुत्र मसीदुल्लाह खाँ एवं इनके पुत्र मसीत खाँ हुए जो मुख्य रुप से कलकत्ते में रहे। मसीत खाँ के पुत्र करामतुल्ला खाँ एवं शिष्य ज्ञान प्रकाश घोष, कन्हाई दत्त, आ.सी. बोराल, मुन्ने खाँ एवं हिरेन्द्र किशोर राय चौधरी हुए। मुन्ने खाँ लखनऊ के मेरिस कालेज में तबला शिक्षक के पद पर रहे एवं यही रह कर इन्होंने शिष्यों के माध्यम से फर्रूखाबाद घराने की परम्परा को आगे बढाया। बांकि सभी शिष्यों ने बंगाल में ही इस परम्परा का विकास किया। वर्तमान में करामतुल्ला के पुत्र साबिर तबला वादन में श्रेष्ठ तबला वादक के रुप में प्रतिष्ठित हैं। फर्रूखाबाद घराने की तालिका के माध्यम से आप इस घराने के विकास क्रम को समझेंगे।

हाजी विलायत अली

निसार हुसैन अली(पुत्र) | हुसैन अली (पुत्र) | करमइतल बख्श | चूडियाइमाम बख्श | नन्नेखाँ | मुबारक अली | सलारी मियां

चूडियाइमाम बख्श → हैदर बख्श(पुत्र) → बन्दे हसन(पुत्र)

मुबारक अली → जहागीर खाँ(इन्दौर)

निसार हुसैन अली

अमीर हुसैन (भान्जे) | गुलाम हुसैन (भतीजा) | शमसुदीन खाँ | हबीबूद्दीन खाँ | अहमदजान थिरकवा

(इनकी शिष्य परम्परा अजराडा घराने में देखें)

अमीर हुसैन

पाया खाँ (पुत्र) | निखिल घोष | शेख खाँ (नागपुर) | माणिकराव पोपटकर | चांद खाँ (कलकत्ता)

अहमद जान थिरकवा

मोहम्मदजान (भाई) | निखिल | अहमद अली (दामाद) | प्रेम बल्लभ | जमीर अहमद (भतीजा) | रोजवेल लायल | अता हुसैन

मोहम्मदजान (भाई) → रशीद मुस्तफा

हुसैन बख्श

→ **अल्लादिया खाँ**

मोहम्मद खाँ(पुत्र) | छोटे खाँ(पुत्र)

|
शेख दाउद(शिष्य परम्परा लखनऊ घराने में देखें)

करम इतल
|
फैयाज खाँ(मुरादाबाद)(पुत्र)
|
अहमद जान थिरकवा | शमसुदीन खाँ | अजीम बख्श
अजीम बख्श
|
निजामुदीन खाँ(पुत्र)

नन्ने खाँ
|
मसीमुल्लाह खाँ(पुत्र)
|
मसीत खाँ(पुत्र)

मसीत खाँ
|
करामतुल्ला खाँ(पुत्र) | ज्ञानप्रकाश घोष | कन्हाईदत्त | आ.सी. बेराल | मुन्ने खाँ (लखनऊ) | हिरेन्दकिशोर राय चौधरी
करामतुल्ला खाँ(पुत्र)
|
साबिर खाँ(पुत्र)

<u>**2.3.1.3 फर्रूक्खाबाद घराने की वादन शैली अथवा बाज**</u> – फर्रूक्खाबाद घराने की स्थापना प्रारम्भ में लखनऊ घराने की एक शाखा के रुप में हुई थी। परन्तु लखनऊ बाज के ऊपर नृत्य के प्रभाव को फर्रूक्खाबाद घराने की वादन शैली में समाप्त कर, शुद्ध तबले के बोलों के आधार पर फर्रूक्खाबाद बाज को विकसित किया गया। इस बाज की विशेषता यहां के गत कायदें हैं। रेले भी इस बाज में बजाए जाते हैं। विभिन्न प्रकार के छन्दों एवं चालों को रौ के रुप में बजाने का आरम्भ इसी घराने में हुआ। अहमद जान थिरकवा तो देहली एवं अजराडा के कायदों की रौ बजाने में सिद्धहस्त थे। विभिन्न यति भेद के अनुसार भी गतों का निर्माण इस बाज की विशेषता है। फर्रूक्खाबाद बाज को अन्य घरानों के कलाकारों द्वारा भी अपनाया गया है एवं हाजी विलायत अली की गतों को नाम लेकर अपने एकल वादन में बड़े गर्व के साथ प्रस्तुत करते हैं। इस बाज में विशेषकर धिर धिर किटतक, घडा–न, घिनगिन, तक तक, धेरा आदि बोलों का प्रयोग पाया जाता है। एक ही गत को विभिन्न लय के दर्जे बनाकर प्रस्तुत करना भी इस बाज की विशेषता है। मुख्य रुप से यह बाज रौ एवं गतों के लिए प्रसिद्ध है। उदाहरण स्वरुप फर्रूक्खाबाद बाज की कुछ गतों के उदाहरण प्रस्तुत किए जा रहे हैं जिससे फर्रूक्खाबाद बाज का परिचय प्राप्त हेगा।

<u>**गत कायदा 1**</u>

तकटधा	धिरधिरकिटतक	धिरधिरकिटतक	दीगिनधा ।
x			
किडनकनातिट	किडनकतिरकिटतक	धिरधिरकिटतक	दीगिनधा ।
2			
तकटता	तिरतिरकिटतक	तिरतिरकिटतक	तीकिनता ।
0			
किडनकनातिट	किडनकतिरकिटतक	धिरधिरकिटतक	दीगिनधा । धा
3			**x**

<u>गत कायदा 2</u>

धिनगिन धागेत्रक धिनगिन तकतक ।	धिनगिन	धागेत्रक	धिनगिन	धा।
x	**2**			
तकधिन गिनधागे धिनगिन तकतक ।	धिनगिन	धागेत्रक	धिनगिन	ता।
0	3			
तिनकिन ताकेत्रक तिनकिन तकतक।	तिनकिन	ताकेत्रक	तिनकिन	ता।
x	**2**			
तकधिन गिनधागे धिनगिन तकतक।	धिनगिन	धागेत्रक	धिनगिन	धा। धा
0	3			**x**

<u>गत</u>

धिनघडा–नधि	धाघेधेनगकिन	धिनगिनतकधिन	धागेत्रकधिनाकता।
x			
तकटतकटधिन	धागेत्रकतूनाकता	तकटतकटधिन	धागेत्रकधिनाकता।
2			
धा–नधिकिटतकटधिकिट	धात्रकधितिटकतगदिगिन	धा– किटतक	ता–किटतक।
0			
ताकिटतकता–नता–न	धा–किटतकता–किटतक	ता–नता–नधा–किटतक	ताकिटतकता–नता–न। धा
3			**x**

2.4 तबले की लखनऊ, बनारस एवं फरूक्खाबाद वादन शैलियों का तुलनात्मक अध्ययन

बाज की दृष्टि से संगीत जगत में तबले के दो बाज पश्चिम बाज एवं पूरब बाज प्रचलित हैं। पश्चिम बाज में देहली एवं अजराडा तथा पूरब बाज में लखनऊ बाज, फर्रूखाबाद बाज एवं बनारस बाज हैं। पंजाब बाज का अपना अस्तित्व है। देहली बाज से लखनऊ बाज का जन्म हुआ। देहली बाज में लखनऊ क्षेत्र की सांगीतिक आवश्यकता के अनुसार लखनऊ बाज का जन्म हुआ। लखनऊ में नृत्य का अधिक प्रचलन था। वाजिद अली शाह जो कि लखनऊ के नवाब थे संगीत के प्रेमी थे एवं स्वयं नृत्यकार भी थे। नृत्य की संगीत के लिए देहली का बाज जो कि बंद बाज था अधिक उपयुक्त नहीं लगा, अतः लखनऊ का बाज खुला हो गया। तिट बोल की निकासी देहली के अपेक्षा उल्टी हो गई जिससे तिट ने तेट का रुप ले लिया एवं जोरदार बोल हो गया। तिरकिट में भी सभी अंगुलियों का प्रयोग किया गया। हथेली का प्रयोग भी धिरधिर बोल की निकास के लिए किया जाने लगा जो कि देहली बाज में नहीं होता था। इस प्रकार देहली का बाज लखनऊ में खुला एवं जोरदार हो गया। नृत्य के अधिक प्रभाव के कारण लखनऊ बाज को नचकरन बाज भी कहा गया।

पूरब के लखनऊ घराने से ही फर्रूखाबाद बाज एवं बनारस बाज ने जन्म लिया। लखनऊ बाज की रचनाओं में नृत्य का प्रभाव था अतः फर्रूखाबाद बाज को शुद्ध रुप से तबला वादन शैली पर आधारित किया गया। लखनऊ बाज के स्वतंत्र रेले की अपेक्षा फर्रूखाबाद बाज में रौ बजाने की तकनीक विकसित की गई। रौ, रेले की भांति ही दुत लय में धारा प्रवाह से बजाई जाती है। रौ कायदों के स्वरुप एवं चालों के स्वरुप का आधार लेकर रेले में प्रयुक्त होने वाले बोलों का प्रयोग किया जाता है। रौ का वजन कायदे एवं चाल के वजन के स्वरुप होता है। तबले के बोलों का आधार लेकर गतों

का निर्माण किया गया। लखनऊ बाज में कायदा, रेला, टुकडे एवं गतें हैं जबकि फर्रूखाबाद बाज की विशेषता इसकी रौ एवं गते हैं। फर्रूखाबाद बाज की गतों में लय एवं यति का प्रयोग पाया जाता है। लखनऊ बाज की एवं फर्रूखाबाद बाज की गतों को उनकी रचना से अलग–अलग पहचाना जाता है। पूरब की अन्य शाखा बनारस बाज भी लखनऊ की भांति खुला है परन्तु लखनऊ की अपेक्षा अधिक जोरदार है। बनारस में भी नृत्य प्रचलित था एवं नृत्य का एक घराना बनारस घराने के नाम से विख्यात रहा। अतः बनारस बाज का विकास भी नृत्य के परिवेश में हुआ। बनारस में ठुमरी, कजरी, चैती आदि गाने की परम्परा भी रही है अतः बनारस के बाज में तबले पर बजने वाली लग्गी एवं लडी भी जुड गई। नृत्य में प्रयोग होने वाली देवी देवताओ की स्तुति को भी बनारस बाज में तबले पर बजाया जाने लगा एवं बनारस बाज का अंग बन गया, जो कि पूरब के अन्य बाज लखनऊ एवं फर्रूखाबाद में नही था। बनारस बाज में पखावज की रचनाओं को भी बजाया जाता है। कहरवा में बजाई जाने वाली लग्गी के स्वरूप की बांट एवं चाल बनारस बाज की विशेषता है जो कि पूरब के अन्य बाज में नहीं है। लम्बी–लम्बी परने, पडार एवं एक विशिष्ट प्रकार की गत जिसे फरद कहा जाता है, बनारस बाज की मुख्य विशेषता है। इन सभी से बनारस बाज पूरब के अन्य बाज लखनऊ एवं फर्रूखाबाद बाज से भिन्न है एवं अपनी अलग पहचान रखता है।

वर्तमान समय में आवागमन के साधन, टी.वी. एवं अन्य ऑडिया–विडियो यंत्रो के माध्यम से संगीत सुनने की सुविधा उपलब्ध है, इस कारण कोई भी वादन शैली अपने मौलिक स्वरुपों में स्थापित रहे, यह कठिन हो रहा है। वादन शैलियों का प्रभाव एक दूसरे की वादन शैली पर पडना स्वाभाविक है एवं कलाकार भी विभिन्न शैलियों से समन्वय करने की चेष्टा भी करते हैं। एक ही कलाकार कई घरानों से शिक्षा लेता है जो कि पहले के समय में भी प्रचलित था। कई वादन शैलियों का अध्ययन कर कलाकार अपनी मौलिक वादन शैली विकसित करता था। देहली बाज एवं अजराडा बाज के कलाकार संयुक्त रुप से रेले, रौ एवं गतों का प्रयोग करते हैं जो पहले विशेष रूप से लखनऊ अथवा फर्रूखाबाद बाज में होता था। उस्ताद अहमज जान थिरकवा ने देहली, अजराडा एवं फर्रूखाबाद तीनों का सुन्दर समन्वय कर अपनी व्यक्तिगत शैली बनाई थी। पुराने कई उस्तादों ने लखनऊ, देहली एवं फर्रूखाबाद घराने से शिक्षा प्राप्त की थी। बनारस घराने के कलाकार केवल बनारस बाज का ही प्रयोग करते हैं यद्यपि बनारस घराने के सामता प्रसाद ने देहली बाज के कायदे एवं फर्रूखाबाद की गतों को बजाने में संकोच नहीं किया।

2.5 लखनऊ, बनारस एवं फरूक्खाबाद घराने के प्रमुख तबला वादकों का योगदान

2.5.1 उस्ताद आफाक हुसैन खां

<u>जन्म</u> – उस्ताद आफाक हुसैन खां का जन्म 12 जुलाई 1930 को हुआ।

खलीफ़ा उस्ताद आफ़ाक़ हुसैन ख़ाँ (लखनऊ घराना)

<u>परिवार, संगीत शिक्षा एवं संगीत यात्रा</u> – आप उस्ताद वाजिद हुसैन खां के पुत्र तथा उस्ताद आबिद हुसैन के पौत्र थे। आपकी तबले की शिक्षा अपने पिता उस्ताद वाजिद हुसैन खां तथा दादा उस्ताद आबिद हुसैन खां के द्वारा हुई जिससे आपने लखनऊ बाज की समस्त बारीकियों को समझा। आपने देश के सभी प्रतिष्ठित संगीतज्ञों के साथ तबले की सफल संगति की। उस्ताद आफाक हुसैन पन्द्रह वर्ष की आयु से सार्वजनिक रूप से तबला वादन करने लगे थे। आपको एकल वादन तथा तबला संगति दोनों में पूरा अधिकार प्राप्त था तथा विशेषकर नृत्य के साथ संगति करने का हुनर तो आपको विरासत में प्राप्त हुआ था। पं0 लच्छू महाराज तथा उनके शिष्यों के साथ अक्सर आप तबला संगति किया करते थे।

उस्ताद आफाक हुसैन ने देश के अतिरिक्त बाहरी देशों में भी आपकी तबला वादन कला का सफल प्रदर्शन किया। जिसमें 1962 में अफगानिस्तान तथा 1985 में भारत महोत्सव पेरिस के कार्यक्रम विशेष उल्लेखनीय हैं। युवावस्था में आप कलकत्ता में रहे तथा 1972 में आप लखनऊ आ गए। उस्ताद आफाक हुसैन खां ने एक वर्ष तक लखनऊ के आकाशवाणी में विभागीय कलाकार के रूप में कार्यक्रम किया। इसके पश्चात् 1973 से 1977 तक आप उत्तर प्रदेश संगीत नाटक अकादमी लखनऊ के कत्थक केन्द्र में कार्यरत रहे। 1977 से जीवन के अन्तिम दिनों तक उस्ताद आफाक हुसैन खां ने लखनऊ दूरदर्शन केन्द्र में अपनी सेवाएं दी।

आप सरल स्वभाव के व्यक्ति थे एवं तबला वादन का प्रचार–प्रसार अपने शिष्यों को तबला की शिक्षा देकर किया। उस्ताद आफाक हुसैन को उनकी तबले की उत्कृष्ट सेवा के लिए सन 1988 में उत्तर प्रदेश संगीत नाटक अकादमी द्वारा अवार्ड दिया गया।

शिष्य परम्परा – आपके शिष्यों की लम्बी सूची है। आपके शिष्यों में आपके पुत्र इल्मास खां के अतिरिक्त शकूर हुसैन, शरीफ अहमद, मृणाल कांतिपाल, तिमिर राय चौधरी(कोलकत्ता), पी.बी. नन्द्रश्री(श्रीलंका), अरूण ताल्लुकदार(आसाम) आदि के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

आबिद हुसैन खां

↓

वाजिद हुसैन खां (भतीजा तथा दामाद)

↓

आफाक हुसैन खां (पुत्र)

↓

इल्मास हुसैन खां (पुत्र)

मृत्यु – 14 फरवरी 1990 को उस्ताद आफाक हुसैन खां का लखनऊ में निधन हुआ।

2.5.2 पंडित गुदई महाराज

जन्म – पंडित गुदई महाराज का जन्म बनारस के कबीर चौरा मोहल्ले में 20 जुलाई सन 1921 को हुआ था।

परिवार, संगीत शिक्षा एवं संगीत यात्रा – इनकी तबले की शिक्षा आरम्भ में अपने पिता बाचा मिश्र से तीन वर्ष तक हुई। पांच वर्ष की आयु से पं0 गुदई महाराज ने तबले की शिक्षा लेना आरम्भ कर दिया था। पिता की मृत्यु के उपरान्त आठ वर्ष की आयु में पं0 गुदई महाराज दरगाही के पुत्र एवं शिष्य विक्रमादित्य मिश्र उर्फ बिक्कू जी महाराज के पास चले गए तथा वहीं पर निरन्तर आठ वर्ष तक आपने बिक्कू जी महाराज से तबला वादन की शिक्षा प्राप्त की।

पं0 गुदई महाराज का नाम सामता प्रसाद था परन्तु वे संगीत के क्षेत्र में गुदई महाराज के नाम से प्रसिद्ध हुए। उनके बाएं तबले से गुदगुदाने की ध्वनि निकलती थी अतः इस कारण इनको गुदई महाराज कहा जाने लगा। पं0 गुदई महाराज का सम्बन्ध बनारस घराने के संस्थापक पं0 रामसहाय मिश्र के शिष्य प्रताप महाराज उर्फ परतप्पूजी से है। पं0 गुदई महाराज के पिता श्याम सुन्दर मिश्र उर्फ बाचा मिश्र परतप्पूजी के पौत्र तथा जगन्नाथ महाराज के पुत्र थे। अतः पं0 गुदई महाराज परतप्पूजी के प्रपौत्र हुए।

पं0 रामसहाय मिश्र(संस्थापक बनारस घराना)

↓

जगन्नाथ मिश्र(पुत्र)

↓

श्याम सुन्दर महाराज उर्फ बाचा मिश्र(पुत्र)

↓

सामता प्रसाद उर्फ गुदई महाराज(पुत्र)

↓

कुमारलाल(पुत्र), कैलाश

पं0 गुदई महाराज ने बनारस बाज की पारम्परिक शिक्षा प्राप्त की थी परन्तु इन्होंने अपनी वादन शैली को नया रंग दिया था जो कि बनारस के समकालीन तबला वादकों से अलग था। पं0 गुदई महाराज बाएं को घुमाकर रखते थे जिससे उन्होंने बाएं की ध्वनि के साथ नए–नए प्रयोग किए थे। बाएं में लम्बी मीड़ निकालना आपकी विशेषता थी जिसका प्रयोग आपने फिल्मी गीत 'नाचे मन मोरा मगन तीधा दिगी दिगी' में बड़ी सुन्दरता से किया था। यह फिल्मी–गीत फिल्म मेरी सूरत तेरी आखें का था। बनारस घराने के अतिरिक्त देहली घराने के कायदे बजाने में भी आपको कोई परहेज नहीं था तथा आपने देहली बाज के दो प्रसिद्ध कायदे धातीधागे नधातिरकिट धातीधागे तिनाकिन तथा धातिटधा तिटधाधा तिटधागे तिनाकिन, एक एच0एम0वी0 के ई0पी0 रिकार्ड में बड़ी सुन्दरता से बजाए हैं।

पं0 गुदई महाराज को तबला एकल वादन तथा तबला संगति दोनों में पूर्ण अधिकार प्राप्त था। पूर्व में सितार वादक पण्डित रविशंकर के साथ आपकी जोड़ी बहुत प्रसिद्ध हुई तथा आपने पं0 रविशंकर के साथ विदेश यात्रा की तथा विदेशों में तबला वादन के क्षेत्र में ख्याति अर्जित की। बाद में आपकी एवं उस्ताद विलायत खां की जोड़ी ने भारत में खूब धूम मचाई। बनारस में कत्थक नृत्य का भी प्रचार था अतः कत्थक नृत्य के साथ भी आप संगति करने में माहिर थे। आपने अपने समय के सभी नृत्यकार पं0बिरजू महाराज, गोपी किशन, सुश्री सितार देवी के साथ कार्यक्रम प्रस्तुत कर श्रोताओं को रोमांचित किया। उसी समय में बनी शास्त्रीय नृत्य पर आधारित फिल्म झनक झनक पायल बाजे में पं0 गुदई महाराज ने तबला वादन किया। इसके अतिरिक्त आपने बसन्त बहार तथा शोले फिल्म में भी तबला वादन किया। सन् 1979 में गुदई महाराज को संगीत नाटक अकादमी अवार्ड से सम्मानित किया गया।

गुदई महाराज तन्त्र वाद्य तथा नृत्य की संगत कर कार्यक्रम में आकर्षण पैदा कर दिया करते थे। पं0 गुदई महाराज को तबला वादन में उत्कृष्ट सेवा हेतु सन् 1979 में पदमश्री से तथा 1991 में पदमभूषण से सम्मानित किया गया।

शिष्य परम्परा – आपने अपनी वादन शैली को शिष्यों में प्रसारित किया। आपके प्रमुख शिष्यों में आपके दो पुत्रों कुमार लाल तथा कैलाश के अतिरिक्त आरडी वर्मन(फिल्म निर्देशक), जै मैसी, जयकृष्ण महन्त, मणीलाल दास, सत्य नारायण वशिष्ठ, गजानन्द तोडे, श्याम लाल बनर्जी, माणिक राव पोपटकर, शंकर राव पोपटकर, कन्हैया लाल भट्ट, गणेश भारद्वाज(भोपाल), देवेन्द्र शर्मा, रमेश सांवत(पूना), चन्द्रकान्त(पूना), श्रीधर शर्मा(कानपुर) विशेष उल्लेखनीय हैं।

मृत्यु – मई माह सन 1994 में पं. गुदई महाराज को नाद रूप संस्था द्वारा पूना में तबला शिक्षण कार्यशाला के लिए आमंत्रित किया गया था। कार्यशाला बहुत सफल हुई भी परन्तु वहीं पर आपकी हृदय गति रूकने से निधन हो गया।

2.5.3 उस्ताद अमीर हुसैन खॉ

जन्म – उ0 अमीर हुसैन खां का जन्म हैदराबाद में सन 1895 में हुआ।

परिवार, संगीत शिक्षा एवं संगीत यात्रा – उ0 अमीर हुसैन खां का सम्बन्ध फरूखाबाद घराने से था। आपके पिता अहमद बख्श प्रसिद्ध सांरगी वादक थे तथा हैदराबाद निजाम के दरबार में नियुक्त थे। उ0 अमीर हुसैन के पिता को तबले का भी ज्ञान था, अतः उस्ताद अमीर हुसैन की प्रारम्भिक शिक्षा अपने पिता अहमद बख्श के द्वारा ही हुई। उस्ताद अमीर हुसैन खां का सम्बन्ध फरूखाबाद घराने के

संस्थापाक उ0 हाजी विलायत अली के पुत्र हुसैन अली खां से है। उ0 मुनीर खां, उ0 हुसैन अली खां के शिष्य थे एवं उस्ताद अमीर हुसैन खां, मुनीर खां के भान्जे तथा शिष्य थे। उ0 मुनीर खां के पश्चात् उस्ताद अमीर हुसैन खां को इस घराने का खलीफा कहा जाता था।

हाजी विलायत खां
↓
हुसैन अली खां (पुत्र)
↓
मुनीर खां (शिष्य)
↓
अमीर हुसैन खां (भान्जे, शिष्य)
↓
पापा खां (पुत्र)

उस्ताद अमीर हुसैन खां मुख्यत तबला एकल वादन प्रस्तुत किया करते थे तथा आपने अपनी वादन शैली को उस समय के तबला वादकों से बिल्कुल अलग बना लिया था, जो कि आपकी एच.एम. वी. के रिकार्ड पर सुनने से लगता है। आपके समकालीन उस्ताद अहमदजान थिरकवा, हबीबूद्दीन, समसुद्दीन आदि थे जो आपके गुरू भाई भी थे। आकाशवाणी बम्बई से भी आपने कार्यक्रम दिए तथा एच. एम. वी. द्वारा भी आपके रिकार्ड निकाले गए जो आज भी उपलब्ध हैं। आपका तबले पर तिरकिट तथा धिरधिर किटतक का बोल बहुत ही सुन्दरता से निकलता था। आपने कई लयकारी के कायदों की भी रचना की थी।

<u>**शिष्य परम्परा**</u> – उस्ताद अमीर हुसैन बाद में बम्बई में आकर रहने लगे तथा इनके भाई गुलाम हुसैन हैदराबाद में रह गए। उस्ताद अमीर हुसैन ने बम्बई में रहकर फरूखाबाद बाज को बहुत प्रचलित किया तथा अनेक शिष्यों को तबले की शिक्षा प्रदान की। इनकी शिष्य परम्परा में इनके पुत्र पापा खां के अतिरिक्त पं निखिल घोष, तुफैल, पन्डरीनाथ नागेश्कर, शेर खां(नागपुर), विनायक कुलकर्णी, बाबा साहेब मिरजकर, अरविन्द मुलगावंकर, श्रीचंद नागेश्कर, दामू अन्ना वाडेगोनकर, अन्ना साहेब टारे, सुधीर संसारे, इकबाल हुसैन, शरीफ खां, माणिक राव पोपटकर, अब्दुल सतार आदि विशेष उल्लेखनीय हैं।

<u>**मृत्यु**</u> – 5 अगस्त 1969 को मुम्बई में आपका निधन हो गया।

अभ्यास प्रश्न

1. तबले के घरानों एवं प्रत्येक घराने के संस्थापक का नाम लिखिए।
2. लखनऊ बाज को अन्य किस नाम से जाना जाता है?
3. फर्रूखाबाद बाज किस रचना के लिए प्रसिद्ध है?
4. बनारस बाज की दो रचनाओं के नाम बताइए जो अन्य किसी बाज में नहीं होती है।

2.6 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप तबले के घराने एवं उनकी वादन शैली के विषय में जान चुके होंगे, जिससे आप तबला वादन सुनकर घराने को पहचान सकेंगे। घरानों के अध्ययन में आपने देखा कि एक ही उस्ताद ने कई घरानो से शिक्षा प्राप्त की एवं अपनी व्यक्तिगत शैली का निर्माण कर संगीत जगत में अपनी पहचान बनाई, विशेषकर ऐसे ही कलाकार शिखर पर रहे हैं। इस इकाई में विभिन्न घरानों की वादन शैली का तुलनात्मक अध्ययन एवं प्रत्येक घराने की उपयोगिता पर प्रकाश डाला गया है जिससे आप वादन शैली के आधार पर घराने को अलग–अलग कर सकेंगे। इस इकाई

के अध्ययन के पश्चात आप अपनी रुचि के अनुसार तबला वादन में अपने लिए बाज का चयन कर सकेंगे जो कि आप की भविष्य की विशेष शिक्षा के लिए सहयोगी होगा।

2.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. **घराना – संस्थापक**

लखनऊ	–	मोदू खाँ एवं बख्शू खाँ
फर्रूखाबाद	–	हाजी विलायत अली
बनारस	–	राम सहाय

2. नचकरन बाज
3. गत
4. फरद एवं पडार

2.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. मिस्त्री, आबान ई0, पखावज एवं तबले के घराने एवं परम्परा।
2. शुक्ला, योगमाया, तबले का उद्‌गम, विकास और वादन शैलियां।
3. सेन, अरुण कुमार, भारतीय तालों का शास्त्रीय विवेचन।

2.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1. तबले के लखनऊ, बनारस एवं फरूक्खाबाद घरानों एवं उनकी वादन शैली के विषय में लिखिए।
2. तबले की लखनऊ, बनारस एवं फरूक्खाबाद घराने की वादन शैलियों का तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत कीजिए।

इकाई 3 – ताल के दस प्राण (काल, मार्ग, क्रिया, अंग, ग्रह, जाति, कला, लय, यति व प्रस्तार) का संक्षिप्त अध्ययन।

3.1 प्रस्तावना
3.2 उद्देश्य
3.3 ताल के दस प्राण
3.4 काल
3.5 मार्ग
3.6 क्रिया
3.7 अंग
3.8 ग्रह
3.9 जाति
3.10 कला
3.11 लय
3.11.1 लयकारी
3.12 यति
3.13 प्रस्तार
3.14 सारांश
3.15 अभ्यास प्रश्न के उत्तर
3.16 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
3.17 निबन्धात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0 संगीत के पाठ्यक्रम बी0ए0एम0टी0(एन)—202 की तीसरी इकाई है। इससे पहले की इकाईयों में आप भारतीय संगीत के प्राचीन इतिहास के विषय में जान गए होंगे। आप तबले के विभिन्न घरानों एवं इनकी वादन शैलियों के विषय में भी जान गए होंगे।

इस इकाई में ताल के प्राण को विस्तार से समझाया गया है। ताल को साकार रूप में स्थापित करने एवं ताल को जीवन देने के कारण ताल के मूल तत्वों को प्राण कहा गया। इस इकाई के माध्यम से आप प्रत्येक प्राण का मार्गी तथा देशी ताल के सन्दर्भ में अध्ययन करेंगे तथा साथ ही वर्तमान प्रचलितताललिपि के सन्दर्भ भी जानेगे। ताल के दस प्राण की वर्तमान में उपयोगिता के विषय में भी इस इकाई में चर्चा की जाएगी।

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप ताल के प्राणों को समझ सकेंगे। आप ताल पद्धति में इनके महत्व से भी परिचित हो सकेंगे। आप वर्तमान में इनकी उपयोगिता को भी जान सकेंगे। इससे आप को प्राचीन ताल पद्धति तथा उसके व्यवहार के विषय में भी ज्ञान हो जाएगा तथा विभिन्न प्रकार की बन्दिशों की रचना हेतु प्रेरित होंगे।

3.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप :—

1. ताल के दस प्राणों को जान सकेंगे।
2. मार्गी तथा देशी तालों के व्यवहार को जान सकेंगे।
3. प्रत्येक प्राण की उपयोगिता को मार्गी तथा देशी ताल के सन्दर्भ में समझ सकेंगे।
4. वर्तमान ताल पद्धति में दस प्राणों की उपयोगिता समझ सकेंगे।

3.3 ताल के दस प्राण

संगीत की प्रतिष्ठा ताल पर होती है अर्थात संगीत का आधार ताल ही है तथा ताल का आधार प्राचीन संगीत के ऋषियों द्वारा स्थापित तत्व हैं। ये तत्व ही ताल के प्राण हैं जो कि दस है। जिस प्रकार मानव में चेतन तथा अचेतन में प्राण ही है जो मानव को गति प्रदान करता है, प्राण निकल जाने पर मानव शरीर का भी अन्त हो जाता है। अतः प्राण तत्व मानव जीवन के लिए आवश्यक तत्व है। उसी प्रकार ताल हेतु भी प्राण आवश्यक तत्व है। प्राचीन भारतीय परम्पराओं के आधार पर मानव में निहित प्राण के दस भेद हैं। इसी से प्रेरित होकर ताल हेतु भी दस प्राण निश्चित किए गए। संगीत रत्नाकर ग्रन्थ में एला प्रबन्ध के अन्तर्गत एला में पदों के दस प्राण का उल्लेख किया गया है। इस प्रकार भारतीय ऋषियों द्वारा भारतीय ताल के तत्वों को भारतीय योग दर्शन तथा अध्यात्म से जोड़ा गया जिससे संगीत के प्रति आस्था एवं श्रद्धा बने एवं संगीत में पवित्रता बनी रहे।

भरत ने ताल के तत्वों को प्राण न कह कर ताल के तत्व के रूप में प्रस्तुत किया। भरत ने इन तत्वों की संख्या आठ बताई जिसके अनुसार काल, मार्ग, क्रिया, काल अवयव, पाणि, ताल भेद, कला एवं यति हैं। संगीत मकरद में सर्वप्रथम ताल के दस प्राणों की चर्चा निम्न श्लोक के माध्यम से की की गई :—

'' काल मार्ग क्रियांगाणि ग्रहोजातिः कला लयः
यति प्रस्तारकश्चेति तालप्राणा दश स्मृताः।।''

इसके अनुसार ताल के दस प्राण काल, मार्ग, क्रिया, अंग, ग्रह, जाति, कला, लय, यति तथा प्रस्तार हैं।

भरत ने अंग नाम से कोई चर्चा नहीं की बल्कि इसको काल अवयव की संज्ञा दी। भरत ने जाति की जो व्याख्या की थी वह जाति काल के सन्दर्भ में है। ताल के सन्दर्भ में वही जाति को उन्होंने ताल भेद के रूप में प्रकट किया।

ग्रह शब्द का भी भरत के नाट्यशास्त्र में ताल तत्वों के सम्बन्ध में प्रयोग नहीं किया गया है। इसके लिए भरत द्वारा पाणि शब्द प्रयोग किया गया। प्रस्तार का भी उल्लेख भरत ने नहीं किया वरन दो मूल मार्गी तालें चच्पुट तथा चाचपुट के अंगों का मंजन कर नई तालों की उत्पत्ति माना है।

मध्यकाल के ग्रन्थ संगीत दर्पण, संगीत परिजात में भी उन्हीं ताल के दस प्राणों का उल्लेख किया गया जो कि संगीत मकरद के ताल के दस प्राण हैं तथा वर्तमान में भी ये ही दस प्राण मान्य हैं जिनकी व्याख्या आगे की जाएगी।

3.4 काल

संगीत में काल को निश्चित करने के लिए ताल की रचना की। जिस प्रकार असीमित काल को सेंकेड, मिनिट, घण्टा, दिन, सप्ताह, माह व वर्ष में निश्चित किया उसी प्रकार संगीत में ताल का मुख्य प्रयोज्य काल को व्यवस्थित कर संगीत को स्थायित्व प्रदान करना था। अतः ताल रचना में काल मुख्य एवं अनिवार्य तत्व है। सभी ग्रन्थों में ताल के दस प्राण में काल का क्रम पहला है। काल गणना हेतु 425 पक्षियों की ध्वनि का भी सहारा लिया गया। काल गणना के लिए क्षण, लव, काष्ठा, निमेष, कला, अुणद्रुत, दुत, लघु, गुरू, तथा प्लुत का आधार लिया तथा तालों हेतु इनसे मात्रा तथा मात्रांश का निर्धारण हुआ। 425 पक्षियों की आवाज से निम्न प्रकार काल निर्धारण किया:—

नेवला की आवाज	—	1/2 मात्रा	द्रुत
नीलकण्ठ की आवाज	—	1 मात्रा	लघु
कौए की आवाज	—	2 मात्रा	गुरू
मयूर की आवाज	—	3 मात्रा	प्लुत

संगीत दामोदर ग्रन्थ में काल निर्णय श्री कृष्ण की बंशी की ध्वनि से किया है जिसके अनुसार कृष्ण जब अपनी बंशी की ध्वनि से राधा को पुकारते थे तो उसका काल प्लुत अथवा तीन मात्रा का होता था। इसके अतिरिक्त कृष्ण की बंशी द्रुत, लघु तथा गुरू के लिए निश्चित थी। द्रुत हेतु पारिजात बंशी, लघु हेतु कनकरेखा बंशी तथा गुरू हेत शशिकला बंशी थी।

समयसार ग्रन्थ में उल्लेख है कि 100 कमलपत्रों को एक के ऊपर एक रखकर सुई से छेद करने का काल एक क्षण है। क्षण का काल निश्चित होने पर अन्य का अनुपात काल निम्न प्रकार हैः—

8 क्षण	—	1 लव
8 लव	—	1 काष्ठा
8 काष्ठा	—	1 निमेष
8 निमेष	—	1 कला
2 कला	—	1 त्रुटि अथवा अणुद्रुत
2 अणुद्रुत	—	1 द्रुत
2 द्रुत	—	1 लघु
2 लघु	—	1 गुरू
3 लघु	—	1 प्लुत
4 लघु	—	1 काकपद

द्रुत, लघु अथवा गुरू में से किसी को भी काल अवधि अपनी क्षमता के आधार पर निश्चित करने से अन्य की उसी अनुपात में काल अवधि निश्चित हो जाएगी। लघु का मान एक मात्रा का माना गया है इसमें वैज्ञानिक आधार लेते हुए एक मात्रा का काल यदि एक सैकेंड माना जाय तो सभी का काल निश्चित हो जाएगा, जिससे संगीत के काल के निरूपण में स्थिरता आ जाएगी। क्योंकि 100 कमलपत्रों को प्रत्येक व्यक्ति अपनी क्षमता अनुसार ही भेद पाएगा जिस कारण काल गणना में प्रामाणिकरण नहीं हो पाएगा। पांच अक्षरकाल के उच्चारण काल को 1 लघु अथवा 1 मात्रा का काल कहा गया है। इसमें भी प्रत्येक व्यक्ति

अपनी क्षमता अनुसार उच्चारण कर सकता है तथा उच्चारण काल पृथक हो सकता है। अतः काल के निश्चित निर्धारण के लिए सैकेण्ड ही सबसे उचित होगा जो सर्वमान्य होगा तथा संगीत में काल निर्धारण को निश्चितता प्रदान करेगा। संगीत हेतु काल निर्धारण अणुद्रुत, द्रुत, लघु, गुरू, प्लुत तथा काकपद आदि से ही किया जाता है। लघु गुरू का आधा, द्रुत लघु का आधा तथा अणुद्रुत दुत का आधा है। प्लुत लघु का तीन गुना तथा काकपद लघु का चार गुना है। अतः इनमें मात्रा में परिवर्तन के पश्चात लघु की मात्रा एक होने पर द्रुत 1/2 मात्रा, अणुद्रुत 1/4 मात्रा, गुरू की दो मात्रा, प्लुत की तीन मात्रा तथा काकपद की चार मात्रा हुई।

3.5 मार्ग

मार्ग का स्थान ताल के दस प्राण में दूसरा है। मार्ग का साधारण अर्थ रास्ता है। किसी भी मार्ग से दो स्थानों की दूरी को मापा जा सकता है उसी प्रकार ताल में मार्ग द्वारा ताल की लम्बाई का ज्ञान होता है। अर्थात ताल की एक आवृत्ति कितनी लम्बाई की है, मार्ग द्वारा इसका ज्ञान हो जाता है। निश्चित काल में कला और पात के समूह को मार्ग कहते हैं। भरत ने तीन मार्गों का उल्लेख किया है चित्त, वार्तिक तथा दक्षिण। शांरगदेव ने इन तीन मार्गों के अतिरिक्त ध्रुव मार्ग भी बताया है। मानसोल्लास ग्रन्थ में ध्रुव मार्ग को चित्रतर कहा गया है। अतः इसके अनुसार चार मार्ग स्थापित किए गए ध्रुव अथवा चित्र, चित्त, वार्तिक एवं दक्षिण। ध्रुव मार्ग का प्रयोग स्वतंत्र रूप से मार्गी तालों में नहीं होता है बल्कि मार्गों के अन्तर्गत भेद करते समय या फिर मागधी गीति में ही इसका प्रयोग होता था। भरत के अनुसार चित्र की दो मात्रा, वार्तिक की चार मात्रा तथा दक्षिण की आठ मात्रा की कला मानी। बाद में ध्रुव मार्ग को भी सम्मिलित किया गया जिससे एक मात्रा की कला निश्चित की गई। निशब्द एवं सशब्द क्रियाओं का विश्रन्ति काल कितना होगा यह मार्ग पर ही आधारित होता है। ध्रुव मार्ग में निशब्द क्रियाऐं नहीं होती हैं अतः इसको मार्गी संगीत में प्रयोग नहीं किया गया है। चार मार्ग को आप निम्नलिखित उदाहरण से समझ सकेंगे:–

ध्रुव मार्ग	– एक मात्रा कला अथवा एकमात्रिक कला तालाघात	1 ×
चित्र मार्ग	– दो मात्रा कला अथवा द्विमात्रा कला	1 2 × o
वार्तिक मार्ग	– चार मात्रा कला अथवा चतुमात्रिक कला	1 2 3 4 + 0 0 0
दक्षिण मार्ग	– आठ मात्रा कला अथवा अष्टमात्रिक कला	1 2 3 4 5 6 7 8 + 0 0 0 0 0 0 0

ऊपर के उदाहरण से स्पष्ट है कि ध्रुव मार्ग एक मात्रा की कला है तथा एक मात्रा में कोई विश्रान्ति नहीं है, चित्र मार्ग में एक मात्रा में एक मात्रा का विश्राम है अतः दो मात्रा की कला है, वार्तिक मार्ग में एक मात्रा में 3 मात्रा का विश्राम है अतः चार मात्रा की कला है तथा दक्षिण में एक मात्रा में सात मात्रा का विश्राम है अतः आठमात्रा की कला है। उपर के विश्राम कला के अनुसार मार्ग से ताल की लम्बाई एवं गति भेद का भी ज्ञान होता है। चित्र मार्ग में द्रुत गति, वार्तिक में मध्य गति तथा दक्षिण में विश्राम अधिक होने पर विलम्बित अथवा धीमी गति का बोध होता है। ध्रुव मार्ग में गति, चित्र मार्ग की गति से दुगुनी होगी अतः इसको अति द्रुत कह सकते हैं। बाद के ग्रन्थों में चित्र के अन्य दो भेद चित्रतर तथा चित्रतम भेद भी बताए गए। चित्रतर ही ध्रुव है अथवा इसका आधा स्वरूप चित्रतम होगा जिसको अति–अति द्रुत गति कहा जा सकता है। चच्चत्पुट मार्गी ताल का उपरोक्त मार्गी से स्वरूप निम्न प्रकार का होगा। लघु का अक्षर काल 5 का माना गया।

चच्चत्पुट चित्रमार्ग	ऽ	ऽ	।	ऽ'
अक्षर काल	**10**	**10**	**5**	**15**
मात्रा	**2**	**2**	**1**	**3**

चच्चत्पुट वार्तिक मार्ग	ऽ	ऽ	1	ऽ′
अक्षर काल	20	20	10	30
मात्रा	4	4	2	6
चच्चत्पुट दक्षिण मार्ग	ऽ	ऽ	1	ऽ′
अक्षर काल	40	40	20	60
मात्रा	8	8	4	12

मार्गी ताल में ध्रुव मार्ग का प्रयोग नहीं किया जाता था।

वर्तमान सन्दर्भ में जबकि विलम्बित, अतिविलम्बित, मध्य, द्रुत तथा अतिद्रुत गति का प्रयोग होने लगा है तो मार्ग के सापेक्ष दक्षिण मार्ग को अति विलम्बित, वार्तिक मार्ग को विलम्बित, चित्र मार्ग को मध्य, ध्रुव अथवा चित्र को द्रुत तथा चित्रतर एवं चित्रतम को अति द्रुत गति का कहा जा सकता है।

एकल गायन के विलम्बित ख्याल में दक्षिण मार्ग, मध्य लय की रचना में वार्तिक तथा झाला एवं तराना में ध्रुव मार्ग का प्रयोग किया जाता है।

एक ताल के ठेके को तीन मार्ग में निम्न प्रकार से प्रदर्शित करेंगेः–

एकताल ध्रुव मार्ग :–

धिं	धिं	धागे	तिरकिट	तू	ना	क	त्ता	धागे	तिरकिट	धि	ना
×		0		2		0		3		4	

एकताल चित्र मार्ग :–

धिं ऽ	धिं ऽ	धा गे	तिर किट	तू ऽ	ना ऽ	क ऽ	ता ऽ	धा गे	तिर किट	धी ऽ	नाऽ
×		0		2		0		3		4	

एकताल वार्तिक मार्ग :–

धिऽऽऽ	धिंऽऽऽ	धाऽगेऽ	तिरकिट	तूऽऽऽ	नाऽऽऽ
×		0		2	
कऽऽऽ	त्ताऽऽऽ	धाऽगेऽ	तिरकिट	धीऽऽऽ	नाऽऽऽ
0		3		4	

एकताल दक्षिण मार्ग :–

धिऽऽऽऽऽऽऽ	धिंऽऽऽऽऽऽऽ	धाऽऽऽगेऽऽऽ	तिऽरऽकिऽटऽ	तूऽऽऽऽऽऽऽ	नाऽऽऽऽऽऽऽ
×		0		2	
कऽऽऽऽऽऽऽ	त्ताऽऽऽऽऽऽऽ	धाऽऽऽगेऽऽऽ	तिऽरऽकिऽटऽ	धीऽऽऽऽऽऽऽ	नाऽऽऽऽऽऽऽ
0		3		4	

प्राचीन संगीतकारों ने पहले ही गति के अतिबिलम्बित, बिलम्बित, मध्य, द्रुत एवं अतिद्रुत भेद की कल्पना कर ली थी तथा वर्तमान संगीत में इन सभी गति भेदों का प्रयोग हो रहा है।

3.6 क्रिया

वैदिक कालीन संगीत से गायन वादन साथ हाथ से ताल देने की प्रथा रही है। वाजसनेयी संहिता में हाथ से ताल देने वाले को गणक कहा है। हाथ से ताल दिखाने वाले का विशेष महत्व होता था। वीणा वादन तथा नृत्य के साथ भी हाथ से ताल देने वाले को नियुक्त किया जाता था। हाथ से ताल प्रदर्शित करने को क्रिया कहा गया। क्रिया का अर्थ सामान्य तौर पर करने से है। संगीत में काल का माप क्रिया के द्वारा ही किया जाता है। प्राचीन समय में काल को प्रकट करने के लिए घन वाद्य का भी प्रयोग किया जाता

था। हाथ से ताल देने की क्रिया दो प्रकार की है सशब्द एवं निशब्द। सशब्द वे क्रिया है जिसमें ध्वनि सुनाई दे तथा निशब्द वे क्रिया है जिसमें ध्वनि सुनाई न दे। सशब्द क्रियाओं को शम्यादि तथा निशब्द क्रियाओं को आवापादि की संज्ञा दी गई। इन क्रियाओं के द्वारा ताल स्थापित की जाती थी जिससे गायक, वादक तथा नृत्यकारों को प्रस्तुती में सहायता मिलती थी। सशब्द तथा निशब्द दोनों ही क्रियाओं के संयोग से ताल प्रकट होती है। इन दोनों का काम काल विभाजन का है। मार्गी तालों के मूल स्वरूप में केवल सशब्द क्रिया ही रहती है तथा निशब्द क्रिया उसके विस्तार को प्रकट करती है।

एक सशब्द क्रिया से दूसरी सशब्द क्रिया के मध्य का समय अथवा कालमान निशब्द क्रिया के द्वारा ही प्रकट किया जाता है। अतः ताल को प्रदर्शित करने में दोनों सशब्द एवं निशब्द क्रियाओं का महत्व है। इन क्रियाओं को एक साधारण उदाहरण से भी समझा जा सकता है कि यदि किसी व्यक्ति से कोई प्रश्न पूछा जाए और वह उसका उत्तर बोलकर दे तो वह क्रिया सशब्द क्रिया होगी और यदि उसका उत्तर संकेत मात्रा से दे तो वह निशब्द क्रिया कहलाएगी।

सशब्द क्रिया – ध्वनियुक्त क्रिया सशब्द क्रिया है तथा यह चार प्रकार की होती है।

1. शम्या – दाहिने हाथ से ताली देना
2. ताल – बांए हाथ से ताली देना
3. सन्निपात – दोनों हाथ से ताली देना
4. ध्रुवा – हाथ से चुटकी बजाकर नीचे की आरे लाना।

निशब्द क्रिया – ध्वनि रहित क्रिया निशब्द क्रिया है तथा यह भी चार प्रकार की है।

1. आवाप – हाथ से उपर उठाकर अंगुलियों को सिकोड़ना
2. निष्काम – नीचे की ओर अंगुलियों को फैलाना
3. विक्षेप – उठे हाथ की अंगुलियों को फैलाकर दक्षिण की ओर गिराना।
4. प्रवेशक – अंगुलियों को झुकाकर सिकोड़ना।

सशब्द एवं निशब्द क्रियाओं के करने के ढंग को कलाविधि कहा गया है। इन क्रियाओं को प्रदर्शित करने के लिए क्रियाओं के नाम का पहला अक्षर संकेत के रूप में प्रयोग किया जाता है जो निम्न प्रकार है।

क्रिया के नाम	**–**	**संकेत**
शम्या	–	श अथावा शं
ताल	–	ता
सन्निपात	–	सं
आवाप	–	आ
निष्काम	–	नि
विक्षेप	–	वि
प्रवेशक	–	प्र

चच्चपुट, चाचपुट तथा उदघट ताल में क्रियाओं का प्रदर्शन निम्न प्रकार से होगाः

चच्चत्पुट	**चाचपुट**	**उदघट**
ऽ ऽ । ऽ′	ऽ । । ऽ	ऽ ऽ ऽ
सं श ता श	**सं रा ता श**	**नि श श**

चच्चत्पुट में क्रियाओं का क्रम सन्निपात, शम्या, ताल, शम्या का होगा, चाचपुट में क्रियाओं का क्रम सन्निपात, शम्या, ताल, शम्या का होगा तथा उदघट में क्रियाओं का क्रम निष्काम, शम्या, शम्या का होगा।

चच्चत्पुट तथा चाचपुट तालों की कला विधि एक जैसी बताई गई है। सशब्द एवं निशब्द क्रियाओं की परिपाटी वर्तमान में दक्षिण भारतीय संगीत में देखी जाती है जिसमें कलाकार प्रस्तुति के साथ से ताल

देता है अथवा मंच पर बैठे कलकारों में से कोई भी हाथ से ताल देता है, अलग से हाथ से ताल देने वाले की आवश्यकता नहीं होती है। वर्तमान के उत्तर भारतीय संगीत में भी ताल को हाथ से प्रदर्शित करने के लिए सशब्द एवं निशब्द क्रिया की जाती है। ताल में सम एवं ताली सशब्द क्रिया तथा खाली निशब्द क्रिया होती है। भातखण्डे लिपि पद्धति में सम को + से व ताली को ताली संख्या तथा खाली को 0 संकेत से प्रकट करते हैं।

3.7 अंग

काल प्राण के अन्तर्गत काल खण्डों की चर्चा की गई है। सूक्ष्म काल खण्ड, कला, काष्ठा, निमेष आदि के संयोग से अंग की रचना होती है। भरत ने मार्गी तालों के उपयोग लिए तीन अंग लघु, गुरू तथा प्लुत ही उपयोगी बताए हैं। दो या दो से अधिक अंगों के संयोग से ताल की रचना होती है। मार्गी ताल चच्च्त्पुट ऽ ऽ । ऽ' की रचना लघु गुरू प्लुत के संयोग से हुई है। एक अंग से ताल की परिकल्पना नहीं की सकती है परन्तु अपवाद स्वरूप संगीत रत्नाकर में दी गई 120 ताल में से आदि ताल, करूण ताल तथा एकताली एक अंग की तालें हैं। वर्तमान में दक्षिण भारतीय संगीत की सात मूल तालों में एकताल भी एक अंग की ताल है। उत्तर भारतीय संगीत में एक अंग की कोई ताल नहीं है। भरत ने केवल लघु, गुरू तथा प्लुत अंगो का ही प्रयोग किया था परन्तु उनके बाद नन्दिकेश्वर ने अपने ग्रन्थ भरतार्णव में द्रुत, काकपद तथा विराम का प्रयोग देशी तालों में किया है। विराम का प्रयोग लघु एवं द्रुत अंग के साथ ही किया जाता है– लघु विराम एवं द्रुत विराम। विराम का स्वतंत्र रूप में कोई अस्तित्व नहीं है। बाद में अणुद्रुत का भी प्रयोग होने लगा। इन अंगों के संकेत चिन्ह तथा मात्रा की तालिका निम्न प्रकार से है।

अंग	संकेत	मात्रा
अणुद्रुत	‿ अर्धचन्द्र	1/4
द्रुत	0 पूर्णचन्द्र	1/2
द्रुत विराम	0 अथवा 0	3/4
लघु	। (खडी रेखा)	1
लघु विराम	।	$1\frac{1}{4}$
गुरू	ऽ	2
प्लुत	ऽ'	3
काकपद	+	4

मार्गी ताल तथा देशी ताल को इन्ही अंगो से प्रकट किया जाता था। दक्षिण भारतीय संगीत पद्धति में भी तालों को अंगों से प्रकट किया जाता है परन्तु उत्तर भारतीय संगीत में तालों को प्रदर्शित करने के उपरोक्त अंगों का प्रयोग नहीं किया जाता बल्कि मात्रा एवं विभाागों द्वारा ताल प्रदर्शित की जाती है। जैसे तीनताल–

धा	धिं	धिं	धा	धा	धिं	धिं	धा	धा	तिं	तिं	ता	ता	धिं	धिं	धा
×				2				0				3			

तीनताल को अंको के रूप में निम्न प्रकार प्रकट किया जा सकता है।

4+4+4+4	1	5	9	13
	×	2	0	3

उपरोक्त से तीनताल में चार–चार विभाग, प्रथम मात्रा पर सम, पांचवी मात्रा पर दूसरी ताली, नौवीं मात्रा पर खाली तथा तेरहवीं मात्रा पर तीसरी तथा अन्तिम ताली है। तीनताल को अंग भेद के अनुसार + + + + रूप से प्रदर्शित करेंगे। अर्थात तीनताल चार काकपद की चार अंगों की ताल है।

कुछ प्रचलित तालों को अंगों के रूप में प्रदर्शित किया जा रहा है। कर्नाटक ताल पद्धति में भी अंग द्वारा ही ताल प्रदर्शित की जाती है।

झपताल	–	ऽ ऽ' ऽ ऽ'	गुरू प्लुत गुरू प्लुत	मात्रा	= 10
एकताल	–	ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ	छः गुरू	मात्रा	= 12
रूपक	–	ऽ' ऽ ऽ	एक प्लुत दो गुरू	मात्रा	= 7
आडाचारताल	–	ऽऽऽऽऽऽऽ	सात गुरू	मात्रा	= 14
दीपचन्दी	–	ऽ' + ऽ' +	प्लुत काकपद प्लुत काकपद	मात्रा	= 14
पंचमसवारी	–	ऽ' + + +	प्लुत काकपद काकापद	मात्रा	= 15
कहरवा	–	+ +	दो काकपद	मात्रा	= 8

उत्तर भारतीय तालों को कर्नाटक ताल पद्धति में भी उपरोक्त विधि से लिखा जाएगा।

3.8 ग्रह

ग्रह का साधारण अर्थ ग्रहण करना अथवा पकड़ना है। ग्रह शब्द का अर्थ घर अर्थात स्थान भी है। भरत ने ग्रह के स्थान पर पाणि शब्द का प्रयोग किया है जिसका अर्थ भी ग्रहण करना ही है। संगीत में ताल का ग्रहण कब किया जाता है उसी के भेद ग्रह भेद के रूप में बताए गए। गायन, वादन तथा नृत्य में ताल को कब पकड़ा जाता है उसे ग्रह कहते हैं अर्थात ताल में जिस स्थान से क्रिया प्रारम्भ की जाती है उसे ग्रह कहा गया। ग्रहण करने के स्थान को ग्रह कहा गया।

ताल को गायन, वादन तथा नृत्य के साथ आरम्भ करने की दो स्थितियां हो सकती है – एक साथ तथा आगे व पीछे। इन्हीं स्थितियों को सम ग्रह एव विषम ग्रह से प्रकट किया गया।

- **सम ग्रह** – गीत और ताल दोनों साथ साथ उठे।
- विषम ग्रह – गीत और ताल के आरम्भ के स्थान में अन्तर।

विषम ग्रह दो प्रकार का होता है – अतीत एवं अनागत जो निम्न है :–

- अतीत ग्रह – सम के आघात के उपरान्त यदि गायन, वादन व नृत्य की क्रिया आरम्भ हो।
- अनागत – सम के आघात के पूर्व यदि संगीत की क्रिया आरम्भ हो।

भरत ने ग्रह के स्थान पर पाणी शब्द का प्रयोग किया था तथा उनके अनुसार इन्होंने समापाणि, अवपाणि तथा उपरिपाणी का उल्लेख किया जो क्रमशः समग्रह, अतीतग्रह तथा अनागत ग्रह हैं।

ग्रह संगीत तथा ताल की उठान अथवा आरम्भ को दर्शाता है। ताल गीत को प्रातिष्ठित करता है अतः ताल में ग्रह का विशेष महत्व है।

संगीत की रचनाओं में तथा ताल में सम वह स्थान है जहां से संगीत रचना तथा ताल आरम्भ की जाती है संगीत कलाकारों द्वारा सुन्दर ढंग से सम का प्रयोग करना ही ग्रह भेद के अन्तर्गत आता है। सामान्य रूप से समग्रह का ही प्रयोग किया जाता है परन्तु चमत्कार उत्पन्न करने के लिए विषम ग्रह का प्रयोग भी होता है। इसका सुन्दर प्रयोग कलाकार की क्षमता एवं कुशलता पर आधारित होता है।

शारंगदेव ने संगीत रत्नाकर में समग्रह को मध्यलय, अतीतग्रह का द्रुत लय तथा अनागत ग्रह का विलम्बित लय में प्रयोग हेतु उपयुक्त बताया। संगीत को जिस ग्रह से आरम्भ करते थे उसी पर समाप्त भी किया जाता था। समग्रह में समाप्त होने पर समावर्तन, अतीत ग्रह से समाप्त होने पर अधिकावर्तन तथा अनागत ग्रह में समाप्त होने पर हीनावर्तन कहा गया है।

3.9 जाति

जाति का अर्थ विशेष पहचान, विशेषता तथा विशेष वर्ग समूह से है जो दूसरे से भिन्न होता है। जिस प्रकार भारतीय समाज में जाति प्रथा है उसी प्रकार तालों को भी जाति में बांटा गया। मार्गी तालों के भरत ने दो भेद किए थे – चतुरश्र एवं त्रयश्र। इनको ही बाद में जाति की संज्ञा दी गई। अतः प्राचीन मार्गी ताल की दो ही जाति चतुरश्र एवं त्रयश्र थी। चच्चत्पुट चतुरश्र की तथा चाचपुट त्रयश्र जाति की ताल थी।

चंत	चत	पु	टः		चा	च	पु	ट
गुरू	गुरू	लघु	प्लुत		गुरू	लघु	लघु	गुरू
2	2	1	3		2	1	1	2
चतुरश्र		चतुरश्र			त्रयश्र		त्रयश्र	

चच्त्पुट ताल में दो खण्ड हैं। पहले खण्ड में दो गुरू मिलकर चार अक्षर अथवा चार मात्रा हो गई। दूसरे खण्ड में एक लघु और एक प्लुत मिलकर चार अक्षर बन गए, इस प्रकार यह चतुरश्र जाति की ताल हुई। चाचपुट ताल के पहले खण्ड में गुरू एवं लघु तथा दूसरा खण्ड में पहले खण्ड का प्रतिबिम्ब लघु एवं गुरू है। पहले एवं दूसरे खण्ड में क्रमशः तीन–तीन अक्षर अथवा मात्रा बन गई, इस प्रकार यह त्रयश्र जाति की ताल हुई। पांच मार्गी तालों में चच्चत्पट चतुरश्र तथा अन्य चार तालें त्रयश्र जाति की थी।

शारंगदेव ने संगीत रत्नाकर में चतुरश्र एव त्रयश्र के अतिरिक्त खण्ड भेद का भी उल्लेख किया है। खण्ड का अर्थ तोड़ने से है अतः चतुरश्र अंग के भेद का खण्डन करके खण्ड जाति प्राप्त हुई। प्लुत को गुरू में, गुरू को लघु में तथा लघु को द्रुत में विघटित किया जाता है। अतः संगीत रत्नाकर के समय तक चतुरश्र, त्रयश्र तथा खण्ड जाति अस्तित्व में आई। बाद में चतुरश्र तथा त्रयश्र जाति के संयोग से मिश्र जाति बनी। खण्ड एवं मिश्र के संयोग से संकीर्ण जाति बनी। अतः वर्तमान में ताल की पांच जातियां चतुरश्र, त्रयश्र, खण्ड, मिश्र तथा संकीर्ण हैं।

संगीत दर्पण में उपरोक्त पांच जातियों के लिए मात्राओं का उल्लेख है जिसके अनुसार त्रयश्र के लिए तीन मात्रा, चतुरश्र के लिए चार मात्रा, खण्ड के लिए पांच मात्रा, मिश्र के लिए सात मात्रा तथा संकीर्ण के लिए नौ मात्रा निर्धारित की गई हैं। खण्ड, मिश्र व संकीर्ण जातियां चतुरश्र तथा त्रयश्र जाति से ही बनी हैं।

चतुरश्र — । । । । (4)

त्रयश्र — । । । (3)

खण्ड –चतुरश्र का आधा भाग करके तथा इसको त्रयश्र में मिलाने से बनी ।

। । । । । (5)

मिश्र– चतुरश्र एवं त्रयश्र जाति को मिलाने से बनी।

। । । । । । । (7)

संकीर्ण – खण्ड एवं चतुरश्र को मिलाने से बनी।

। । । । । । । । । (9)

उपरोक्त पांच जातियों को भारतीय समाज की वर्ण व्यवस्था के साथ भी जोड दिया गया। जिसके अनुसार चतुरश्र जाति को ब्राहमण, त्रयश्र जाति को क्षत्रिय, खण्ड जाति को वैश्य, मिश्र जाति को शूद्र तथा संकीर्ण जाति को वर्ण संकर कहा गया। संगीत रत्नाकर में एला प्रबन्ध गायन की चार रिति नादावती, हंसावती, नन्दावती तथा भद्रावती वर्णित हैं जो क्रमशः त्रतुरश्र, त्रयश्र, खण्ड एवं मिश्र जाति से सम्बन्धित हैं।

दक्षिण भारतीय संगीत की तालों का आधार उपरोक्त पांच जाति हैं। दक्षिण भारतीय संगीत की मूल तालें सात है तथा इनके जाति भेद से प्रत्येक की पांच तालें बनती है तथा इस प्रकार दक्षिण संगीत की 35 तालों का निर्माण होता है। लघु की काल अवधि सामान्यतः चार होती है परन्तु जातियों के लिए उसकी अवधि जाति के अनुसार बदल जाती है, जैसे त्रयश्र में तीन, खण्ड में पांच, मिश्र में सात तथा संकीर्ण मे नौ हो जाती हैं। इन जातियों से विभिन्न लय भेद भी प्राप्त होते हैं जिनका उत्तर भारतीय ताल में प्रयोग होता है।

चतुरश्र – बराबर, दुगुन, चौगुन, अठगुन।
त्रयश्र – पौनी, डेढगुन, तिगुन, छःगुन।
खण्ड – सवाई गुन, चार में पांच मात्रा।
मिश्र – पौने दो गुन, चार में सात मात्रा।
संकीर्ण – सवा दो गुन, चार में नौ मात्रा।

3.10 कला

कला का समान्य किसी कार्य को भली भांति नियमानुसार करने का कौशल हैं। छन्द शास्त्रों में मात्रा को कला कहते हैं। शक्ति का आकार होने पर शिव को कलानिधि कहा जाता है। संगीत, काव्य, नाट्य, चित्र आदि की अभिव्यक्ति का माध्यम कला है। ताल के सन्दर्भ में कला प्रयोग निशब्द क्रिया, ताल का भाग तथा गुरू अंग अथवा दो मात्रा के लिए किया गया है। कला का प्रयोग ताल के विभिन्न स्वरूपों की रचना में किया जाता था। सशब्द क्रिया को भरत ने पातकला कहा।

भरत द्वारा ताल के तीन भेद यथाक्षर, द्विकल तथा चतुष्कल बताए जिसका मुख्य आधार गुरू है। अतः सम्भवतः इस कारण गुरू को कला कहा गया। यथाक्षर को एकल कहा गया है। एकल का अर्थ है जिसके प्रत्येक खण्ड अथवा पादभाग में एक–एक कला हो। एकल स्वरूप में सभी क्रियाएं सशब्द होती है अतः एकल भेद में सशब्द क्रिया कला है। मार्गी ताल की सभी तालों में एकल स्वरूप में केवल सशब्द क्रिया होती है जिसमें ताल उदघट अपवाद है, जिसके एकल स्वरूप में निशब्द क्रिया आरम्भ में होती है। तालों के द्विकल तथा चतुष्कल भेदों में दोनों सशब्द एवं निशब्द क्रियाऐं होती हैं, अतः कला सशब्द एवं निशब्द दोनों क्रिया का प्रतीक है। पांच निमेष के बराबर समय से एक मात्रा तथा मात्रा के संयोग से कला बनती है। तालों के द्विकल तथा चतुष्काल भेदों में सारी कलाऐं गुरू से ही होती हैं। ताल के नाम में प्रयुक्त अक्षरों के अनुसार यदि पात हो तो उसे यथाक्षर अथवा एकल, जब यह दो गुरू से युक्त होता है तो उसे द्विकल तथा चार गुरू से युक्त होने पर इसको चतुष्कल कहा जाता है। चच्चत्पुट तथा चाचपुट ताल की एकल, द्विकल तथा चतुष्कल भेद रचना विधि निम्न प्रकार से हैः–

	च	**च्च**	**त्पु**	**ट**
यथाक्षर अथवा एकल	S	S	|	S'
प्रत्येक मात्रा को दुगनी की गई	SS	SS	||	S'S'
सभी को गुरू में परिवर्तित करने पर	SS	SS	S	SSS
द्विकल स्वरूप	SS	SS	SS	SS
चतुष्कल स्वरूप	SSSS	SSSS	SSSS	SSSS

	चा	**च**	**पु**	**ट**
यथाक्षर काल अथवा एकल	S	|	|	S
प्रत्येक मत्रा को दुगना किया	SS	||	||	SS
सभी को गुरू में परिवर्तित किया	SS	S	S	SS
द्विकल स्वरूप	SS	SS	SS	SS
चतुष्कल स्वरूप	SSSS	SSSS	SSSS	SSSS

चच्चत्पुट ताल में सभी को गुरू में परिवर्तित करने के लिए दो प्लुत को तीन गुरू में परिवर्तित किया गया। उसके बाद अन्तिम मात्रा से एक गुरू लेकर उसको तीसरी मात्रा में जोड़ा गया जिससे द्विकल स्वरूप बना तथा इसको दुगुना करने पर चतुष्कल स्वरूप प्राप्त होता है। चाचपुट में भी पहले प्रत्येक मात्रा दो गुना की गई उसके पश्चात सभी को गुरू में बदला जो कि बीच की दो लघु से एक गुरू बनाकर बनी, जिससे द्विकल भेद बना तथा इसका दो गुना करने पर चतुष्कल भेद प्राप्त हुआ।

प्राचीन समय में लय गति को धीमा करने के लिए कला का प्रयोग किया जाता था। वर्तमान समय में उत्तर भारतीय ताल पद्धति में भी ताल की लम्बाई, कला भेद का प्रयोग कर बढ़ाई जाती है। वर्तमान की ख्याल गायकी में विलम्बित तथा अतिविलम्बित लय का प्रयोग किया जाता है जिसको क्रमशः सामान्य भाषा में चौबीस मात्रा की एकताल एवं अठतालिस मात्रा की एकताल कहा जाता है। इस प्रकार विलम्बित में एकताल की लम्बाई 24 मात्रा की तथा अतिविलम्बित में 48 मात्रा की हो गई। एकताल का यह स्वरूप द्विकल तथा अतिबिलम्बित का रूपरूप चतुष्कल का हो गया। एकताल के इन स्वरूपों को चित्र मार्ग एवं वार्तिक मार्ग में मार्ग प्राण के अन्तर्गत दिया गया है। वर्तमान के ताल सन्दर्भ में द्विकल, चतुष्कल शब्द का प्रयोग नहीं होता है।

3.11 लय

लय पूरे ब्रहमाण्ड में व्याप्त है तथा इसमें विकृति आने पर प्रलय आ जाता है। सूर्य का उदय तथा अस्त होना, पृथ्वी के द्वारा सूर्य की परिक्रमा जो कि गति की समानता के साथ होती है, प्रकृति में लय के उदाहरण है। मानव शरीर रचना में हृदय के स्पन्दन की समान गति एवं नाड़ी की समान गति शरीर को स्वस्थ्य रखती है तथा इसमें अनियमितता आने पर मनुष्य अस्वस्थ हो जाता है। नाड़ी की तथा हृदय के स्पन्दन की समान गति ही लय है जो मानव के शरीर को सन्तुलित कर उसको स्वस्थ्य रखती है।

संगीत में भी लय का महत्वपूर्ण स्थान है तथा बिना लय के संगीत हो ही नहीं सकता। जो स्थान शरीर में नाड़ी स्पन्दन का है वही स्थान संगीत में लय का है। लय को जब मात्राओं के आवर्तन में व्यवस्थित किया जाता है तो ताल का निर्माण होता है, अतः ताल का आधार भी लय है। समय की समान गति ही लय है।

संगीत रत्नाकर ग्रन्थ में क्रिया के अन्त में जो विश्रान्ति अथवा विराम होता है उसको लय कहा गया है। संगीत दर्पण में पं. दामोदर द्वारा दो क्रियाओं को बीच होने वाल अन्तर काल को लय कहा है। संगीत पारिजात में भी उक्त परिभाषा का समर्थन किया है। संगीत पारिजात तथा संगीत दर्पण में लय की व्याख्या संगीत रत्नाकर में दिए गए श्लोक के द्वारा ही की :—

क्रियान्तरविश्रान्तिलर्यः स त्रिविधोमतः।
तत्ताद्विरामकालेन द्रुतमध्यविलम्बिताः।।

विराम काल के तीन भेद द्रुत लय, मध्य तथा विलम्बित बताए हैं। अतः लय तीन प्रकार द्रुत, मध्य एवं विलम्बित, की मानी गई। द्रुत से दुगनी विश्रान्ति वाली लय मध्य तथा मध्य से दुगनी विश्रान्ति वाली लय को विलम्बित कहा गया है। अतः इन तीनों लयों के परस्पर सम्बन्ध है। अतः किसी एक को आधार मान कर ही अन्य दो को निश्चित किया जा सकता है, स्वतन्त्र रूप से नहीं। विलम्बित तथा द्रुत लय को अति विलम्बित तथा अति—अति विलम्बित तथा द्रुत के अति द्रुत तथा अति—अति द्रुत भेद वर्तमान में क्रमशः ख्याल गायन शैली के विलम्बित ख्याल में तथा तराना एवं तन्त्र वाद्य पर झाला में प्रयोग हो रहा है, जो कि कलाकार के कौशल पर निर्भर करता है। लय के भेद संगीत में रस तथा भाव की निष्पत्ति में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। द्रुत लय में रौद्र, वीर, वीभत्स, भयानक तथा अदभुत, मध्य लय में हास्य तथा श्रृंगार तथा विलम्बित लय में शान्त एवं करूण रस की निष्पत्ति बताई गई है। भरत ने नाट्यशास्त्र में ओद्य, अनुगत एवं तत्व को क्रमशः द्रुत, मध्य एवं विलम्बित के सापेक्ष बताया है।

संगीत में लय भेद द्रुत, मध्य एवं विलम्बित लय प्रयोग होते हैं तथा इन सभी के उपयुक्त प्रयोग से संगीत कार्यक्रम सफल होता है। गायन में अतिविलम्बित एवं अति—अति विलम्बित करने पर गीत के शब्द स्पष्ट नहीं रह पाते क्योंकि उनको लय एवं स्वर के साथ तोड़ना पड़ता है। अति द्रुत एवं अति—अति द्रुत

लय में भी गति के शब्द स्पष्ट नहीं सुने जा सकते हैं, जिससे गीत के काव्य की आत्मा के साथ अनर्थ होता है। लय इतनी ही रखी जानी चाहिए कि गीत के काव्य में स्पष्टता रहे। तराना, निरर्थक शब्दों से बना होता है अतः इसमें अति तथ अति–अति द्रुत लय का प्रयोग कर श्रोताओं की वाह–वाह लेने में कोई बुराई नहीं है। सामान्य संगीत के श्रोताओं को द्रुत लय में अधिक आनन्द आता है।

संगीत में लय का कोई प्रमाण निश्चित नहीं किया गया अर्थात विलम्बित लय कहने से यह पता नहीं चलता कि इसका समय माप क्या है। यदि 1 सेकेण्ड को विलम्बित लय में एक मात्रा मान लें तो इससे लय को प्रमाणित किया जा सकता है।

3.11.1 <u>लयकारी</u> – जैसा कि उपरोक्त बताया गया है कि द्रुत से दुगुनी विश्रान्ति वाली मध्य लय तथा मध्यलय से दुगनी विश्रान्ति लय विलम्बित लय कहलाती है। यह दुगुना करना ही लयकारी कहलाता है। अर्थात तीनताल को यदि दो गुना करेंगें तो तीनताल आठ मात्रा की होगी एवं यदि तीनताल की प्रत्येक मात्रा को चौगुना करेंगे तो तीनताल चारमात्रा की होगी, यही क्रमशः दुगुन एवं चौगुन की लयकारी कहलाएगी। दुगुन में विश्रान्ति काल आधा तथा चौगुन में विश्रान्ति काल 1/4 हो जाएगा। एक मात्रा में एक मात्रा से अधिक मात्राओं को प्रयोग करने पर लयकारी बनती है। मध्य लय विलम्बित लय की दुगुन है, द्रुत लय मध्यलय की दुगुन है एवं द्रुत लय विलम्बित लय की चौगुन लयकारी है।

ताल के अंग लघु, गुरू, प्लुत एवं काकपद से भी लयकारी को समझा जा सकता है। लघु को एक मात्रा, गुरू को दो मात्रा, प्लुत को तीन मात्रा तथा काकपद को चार मात्रा से प्रदर्शित करते हैं। अतः लघु की एक मात्रा के सापेक्ष गुरू दुगुन की, प्लुत तिगुन की तथा काकपद चौगुन की लयकारी प्रदर्शित करेंगे, जो कि गुरू, प्लुत एवं काकपद को लघु में परिवर्तित करके प्राप्त होगी–

लघु	गुरू	प्लुत	काकपद
।(1)	ऽ (1+1)	ऽ´(1 1 1)	+ (1+1+1+1)

अतः एक मात्रा में दो मात्रा दुगुन, एक मात्रा में तीन मात्रा तिगुन एवं एक मात्रा में चार मात्रा चौगुन की लयकारी कहलाएगी। ताल की एक आवृत्ति में दुगुन दो बार, तिगुन तीन बार तथा चौगुन चार बार प्रयोग की जाएगी। इसके विपरीत एक आवृत्ति की दुगुन, तिगुन एवं चौगुन में ताल की आवृत्ति के 1/2–आधे भाग, 1/3–एक तिहाई भाग तथा 1/4–एक चौथाई भाग में लयकारी प्रयोग होगी।

दुगुन, तिगुन व चौगुन लयकारी के अतिरिक्त आड़, कुआड, बिआड लयकारी का प्रयोग वर्तमान के संगीत में किया जाता है। आड़ लयकारी तिगुन की आधी अर्थात डेढ़ गुन की लयकारी जिसका अर्थ एक मात्रा में डेढ मात्रा है तथा जिसको 3/2 से प्रकट करते हैं। कुआड लयकारी सवागुन की लयकारी है, अर्थात 1 मात्रा में सवा मात्रा जिसे 5/4 से प्रकट करते हैं (चार मात्रा में पांच मात्रा)। बिआड़ लयकारी पौने दो गुन की लयकारी है, अर्थात एक मात्रा में पौने दो मात्रा जिसको 7/4 से प्रकट करते हैं (चार मात्रा में सात मात्रा)।

3.12 यति

यति का उल्लेख सर्वप्रथम भरत ने नाट्यशास्त्र में निम्न श्लोक के माध्यम से किया :–

लयप्रवृत्त वर्णानामक्षराणामक्षराणाम थगपि वा(च)।
नियमो या(यो) यतिः भात तु गीत वाद्यसमाश्रया।।

अर्थात वर्णों और अक्षरों में लय के लक्ष्य का बोध कराने वाला नियम यति कहलाता है। यति, गीत एवं वाद्य के आश्रित होती है।

शारंगदेव ने यति की परिभाषा निम्न श्लोक के माध्यम से की :–

'लयप्रवृत्तिनियमों यतिरित्याभिधीयते''

जिसके अनुसार लय प्रयोग के नियम को यति कहा है।

पं0 दामोदर ने भी संगीत दर्पण में संगीत रत्नाकर की परिभाषा को स्वीकार किया तथा उसमें भी उपरोक्त संगीत रत्नाकर में दिए गए श्लोक का उदघृत किया। भरत ने तीन प्रकार की यति का उल्लेख किया स्रोतोगता, गोपुच्छा तथा समायति। संगीत रत्नाकर में भी उक्त तीन यति का ही उल्लेख है परन्तु संगीत दर्पण में पांच यति – समा, स्रोतोगता, मृदंगा, पिपिलिका तथा गोपुच्छा का उल्लेख किया गया, जिसका समर्थन बाद में संगीत पारिजात, तालदीपिका आदि ने भी किया।

अतः लय प्रयोग के नियम को यति कहते हैं और वह पांच प्रकार समा, स्रोतावता, मृदंगा, पिपिलिका तथा गोपुच्छा की होती है। इसके तीन लय भेद विलम्बित, मध्य तथा द्रुत लय के प्रयोग से नियम निश्चित किए गए हैं।

<u>समायति</u> – आरम्भ, मध्य तथा अन्त तक एक ही लय प्रयोग होने पर समायति कहलाती है। अतः आरम्भ से अन्त तक विलम्बित लय, आरम्भ से अन्त तक मध्य लय तथा आरम्भ से अन्त तक द्रुत लय का प्रयोग समायति है। इसको निम्न चित्र से प्रदर्शित कर सकते हैं।

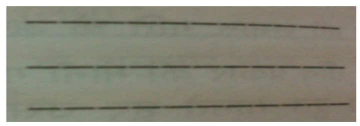

<u>स्रोतागता</u> – आरम्भ में विलम्बित, बीच में मध्यलय तथा अन्त में द्रुत लय का प्रयोग होने पर स्रोतागता यति होती है जिसको निम्न चित्र से प्रदर्शित करेंगे।

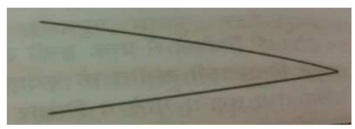

<u>मृदंगा</u> – इस यति का आधार मृदंग का आकार है। जिसके अनुसार आरम्भ में द्रुत लय, बीच में विलम्बित लय तथा अन्त में फिर से द्रुत लय का अथवा आरम्भ एवं अन्त में मध्य एवं बीच में विलम्बित लय का प्रयोग होने पर मृदंगा यति होती है। इसमें केवल दो लय प्रयोग होते हैं, अतः आरम्भ एवं अन्त की लय के सापेक्ष मध्य भाग में यह विलम्बित होती है।

<u>पिपिलिका</u> – यह यति मृदंगा यति की विपरीत है तथा इस यति को चींटी से सम्बन्धित माना है। इसमें भी दो ही लय प्रयोग होती हैं। इसका आधार चीटी का आकार है जो कि आरम्भ एवं अंत का भाग मध्य भाग की अपेक्षा फैला हुआ होता है जो कि निम्न चित्र से स्पष्ट होगा। अतः आरम्भ एवं अन्त में विलम्बित या मध्य तथा मध्य स्थान में मध्य या द्रुत लय का प्रयोग होने पर पिपिलिका यति होती है।

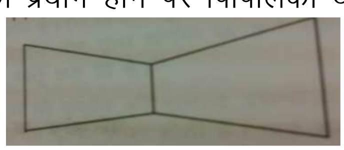

<u>गोपुच्छा</u> – इस यति का सम्बन्ध गोपुच्छ अथवा गाय की पूंछ के आकार से है जो कि निम्न चित्र से स्पष्ट होगा।

उक्त आकार के अनुसार आरम्भ में द्रुत, बीच में मध्य लय तथा अन्त में विलम्बित लय का प्रयोग होने पर यति गोपुच्छा कहलाती है तथा यह यति स्रोतगता की विपरीत होती है।

3.13 प्रस्तार

ताल के अंग द्रुत, लघु आदि (एक अथवा अधिक अवयवों) के आधार पर जो भेद बनते हैं उनको बनाने की विधि को प्रस्तार कहते हैं। प्लुत में द्रुत, लघु तथा गुरू को समाहित कर उनके विभिन्न संयोग से अनेक प्रकार बनते हैं तथा इनको बनाने की विधि तथा कुल मात्रा संख्या प्रस्तार के अर्न्तगत आती है। प्लुत के उन्नीस प्रस्तार निम्न प्रकार से बनाए जाते हैं:–

1	ऽ'	
2	। ऽ	प्लुत को लघु तथा गुरू में खण्डित करके।
3	0 0 ऽ	दूसरे प्रस्तार के लघु को दो द्रुत में विभाजित कर बना।
4	ऽ ।	यह दूसरे प्रस्तार के अंग को उलट कर प्राप्त हुआ।
5	। । ।	चौथे प्रस्तार के गुरू को दो लघु में विभाजित किया।
6	0 0 ।।	इसमें पांचवे प्रस्तार के बाई ओर के लघु को दो द्रुत में विभाजित किया।
7	0 । 0।	इसमें छठे प्रस्तार के द्रुत एवं लघु का स्थान बदलने से प्राप्त किया।
8	। 0 0 ।	इसमें भी सातवें प्रस्तार के द्रुत एवं लघु का स्थान परिवर्तन किया।
9	0 0 0 0 ।	आठवें प्रस्तार के पहले लघु को दो द्रुत परिवर्तित किया।
10	0 ऽ 0	नौवें प्रस्तार के अन्तिम लघु को दो द्रुत में विभाजित कर तथा बाद के चार द्रुत से एक गुरू बना कर प्राप्त किया गया।
11	0 । । 0	दसवें प्रस्तार के गुरू को दो लघु में परिवर्तित कर।
12	। 0। 0	ग्यारवें प्रस्तार के लघु तथा द्रुत के स्थान परिवर्तित कर।
13	0 0 0 । 0	बारहवें प्रस्तार के पहले लघु को दो द्रुत में विभाजित कर।
14	ऽ 0 0	तेरहवें प्रस्तार के लघु को दो द्रुत में विभाजित करने पर छः द्रुत प्राप्त हुए, जिससे पहले चार द्रुत को एक गुरू में परिवर्तित किया तथा बाद में दो द्रुत बचे।
15	। । 00	चौदहवें प्रस्तार के पहले गुरू को दो लघु में विभाजित किया।
16	00 ।00	पन्द्रहवें प्रस्तार के पहले लघु को दो द्रुत में विभाजित किया।
17	0 । 0 0 0	सोलहवें प्रस्तार के तीसरे स्थान के लघु को दूसरे स्थान पर रखकर प्राप्त हुआ।
18	। 0 0 0 0	सत्रहवें प्रस्तार के दूसरे स्थान के लघु को प्रथम स्थान पर रखकर प्राप्त हुआ।
19	0 0 0 0 0 0	अठारवें प्रस्तार के लघु को दो द्रुत में विभाजित कर प्राप्त हुआ।

इस प्रकार द्रुत का एक प्रस्तार, लघु के दो प्रस्तार तथा गुरू के छः प्रस्तार बन सकते हैं।

द्रुत		–	0
लघु –	पहला प्रस्तार	–	।
	दुसरा प्रस्तार	–	00
गुरू –	पहला प्रकार	–	ऽ
	दूसरा प्रकार	–	।।
	तीसरा प्रकार	–	00।

चौथा प्रकार – 0 I 0
पांचवा प्रकार – I 0 0
छठा प्रकार – 0 0 0 0

दूसरे प्रस्तार में गुरू को लघु में विभाजित किया गया, तीसरा प्रस्तार में दूसरे प्रस्तार के पहले लघु को दो द्रुत में विभाजित किया तथा चौथे एवं पांचवे प्रस्तार में लघु को एक–एक कर बांई ओर स्थानांतरित किया गया तथा छठा एवं अन्तिम प्रस्तार लघु को भी दो द्रुत में विभाजित किया गया। इस प्रकार गुरू के छः प्रस्तार प्राप्त किए गए। अतः प्रस्तार अंगों को खण्डित कर एवं उनके विभिन्न संयोंगों से देशी तालें बनी।

<u>वर्तमान सन्दर्भ में उपयोगिता</u> – भारत में दोताललिपि उत्तर भारतीय तथा कर्नाटक ताललिपि प्रचलित हैं। उत्तर भारतीय ताललिपि में दस प्राण में से केवल लय, जाति, ग्रह, क्रिया तथा यति ही प्रयोग में आती है। लय संगीत के लिए आवश्यक अंग है। लय के तीन भेद विलम्बित, मध्य तथा द्रुत लय का प्रयोग किया जाता है तथा इसके अतिरिक्त अति विलम्बित तथा अति द्रुत का प्रयोग संगीत रचनाओं में होता है। द्रुत गति की तानें, तोडे उत्तर भारतीय संगीत में रोचकता तथा आर्कषण उत्पन्न करते हैं। जाति का प्रयोग लयकारी प्रदर्शन में देखने को मिलता है। ध्रुपद, धमार गायन शैली में द्रुत गति की तानों का प्रयोग नहीं होता बल्कि संगीत रचना की लयकारी प्रस्तुत की जाती है। तबला तथा पखावज वादक वाद्य पर लयकारी का प्रदर्शन कर अपने कौशल का परिचय देते हैं। यति का प्रयोग तबला व पखावज की गत की रचनाओं में होता है। प्रस्तार का कुछ अंश तबला के कायदे व रेले आदि के पल्टों में देखने को मिलता है। क्रिया के रूप में ताली तथा खाली का ही प्रयोग है। संगीत में वैचित्र के उद्देश्य से विषम ग्रह का प्रयोग भी किया जाता है।

कर्नाटक ताल में क्रिया, अंग, ग्रह, जाति, लय, यति एवं प्रस्तार का वर्तमान में भी प्रयोग हो रहा है। क्रिया कर्नाटक संगीत का मुख्य अंग है। प्रत्येक संगीत प्रस्तुति में हाथ से ताली देकर ताल दिखाना आवश्यक होता है जो कि क्रिया के अन्तर्गत आता है। ताल को अंग द्वारा ही प्रदर्शित किया जाता है। समग्रह एवं विषम ग्रह का प्रयोग इस ताललिपि में है। कर्नाटक ताल पद्धति जाति पर ही आधारित है तथा जाति भेद के आधार पर सात मूल तालों से पैंतीस तालों का निर्माण किया जाता है, जो कि प्रस्तार के अन्तर्गत आता है। लय प्रत्येक संगीत का अनिवार्य अंग तथा यति का प्रयोग कलाकार अपनी क्षमता के अनुसार करता है।

अभ्यास प्रश्न

क) निम्न प्रश्नों के उत्तर दीजिए :–

1. सशब्द क्रिया की संख्या कितनी है?
2. निशब्द क्रिया की संख्या कितनी है?
3. मार्ग कितने प्रकार के हैं?
4. संगीत रत्नाकर में दी गई एक अंग की कौन सी तालें है?
5. अणु द्रुत तथा प्लुत को किन संकेत चिन्हों से प्रदर्शित किया जाता है?
6. झपताल एवं रूपक ताल को अंगों के माध्यम से प्रस्तुत करें।
7. जाति की संख्या कितनी है?
8. 7/4 लयकारी को क्या कहते हैं?

3.14 सारांश

संगीत का आधार ताल है तथा ताल के निरूपण का आधार प्राचीन संगीत विद्वानों द्वारा निर्धारित दस प्राण है। प्रस्तुत इकाई में आपने ताल के इन दस प्राणों का विस्तृत अध्ययन किया तथा आप ताल एवं ताल के निरूपण के सिद्धान्त को ताल के दस प्राण के माध्यम से समझ गए होंगे। ताल के दस प्राण यद्यपि प्राचीन मार्गी तथा देशी तालों के सन्दर्भ में ही प्रस्तुत किए गए परन्तु इन प्राणों के अध्ययन से वर्तमान ताल प्रकरण में दिशा निर्देश प्राप्त होते हैं जिससे ताल पद्धति को समर्थ किया जा सकता है। वर्तमान तालों को समझने के लिए उनके प्राचीन मूल स्वरूप को समझने की आवश्यकता है जो कि आपने इस इकाई के माध्यम से समझा है। इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप अपनी क्षमता अनुसार ताल के नए प्रयोग तथा रचनाओं के निर्माण का प्रयास कर सकेंगे।

3.15 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

क) निम्न प्रश्नों के उत्तर दीजिए :–

1. चार
2. चार
3. चार
4. आदिताल एक लघु ।, करूण ताल एक गुरू ऽ
5. अणुद्रत ◡ प्लुत ऽ'
6. झपताल ऽ ऽ' ऽ ऽ' रूपक – ऽ' ऽ ऽ
7. पांच
8. बिआड लयकारी

3.16 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. सेन, अरूण कुमार, भारतीय तालों का शास्त्रीय विवेचन, मध्य प्रदेश हिन्दी अकादमी, रायपुर, म0प्र0।
2. चौधरी, सुमद्रा, भारतीय संगीत में ताल और लय विधान।
3. स्वामी पागलदास, ताल के दस प्राण, तबला अंक, संगीत कार्यालय, हाथरस, उ0प्र0।

3.17 निबन्धात्मक प्रश्न

1. मार्गी तथा देशी ताल के सन्दर्भ में काल, मार्ग, क्रिया एवं अंग की व्याख्या कीजिए।
2. लय, जाति, यति तथा प्रस्तार की वर्तमान सन्दर्भ में व्याख्या कीजिए।
3. वर्तमान सन्दर्भ में ताल के दस प्राण की उपयोगिता पर प्रकाश डालिए।

इकाई 4 – तबला वादकों का जीवन परिचय(उ0 हबीबुद्दीन खां, पं0 स्वपन चौधरी व पं0 कण्ठे महाराज)।

4.1 प्रस्तावना
4.2 उद्देश्य
4.3 संगीतज्ञों का जीवन परिचय
 4.3.1 उ0 हबीबुद्दीन खां
 4.3.2 पं0 स्वपन चौधरी
 4.3.3 पं0 कण्ठे महाराज
4.4 सारांश
4.5 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
4.6 संदर्भ ग्रन्थ सूची
4.7 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
4.8 निबन्धात्मक प्रश्न

4.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0 संगीत के पाठ्यक्रम बी0ए0एम0टी0(एन)–202 की चौथी इकाई है। इससे पहले की इकाईयों में आप भारतीय संगीत के प्राचीन इतिहास के विषय में जान गए होंगे। आप तबले के विभिन्न घरानों एवं इनकी वादन शैलियों के विषय में जान गए होंगे। साथ ही आप ताल के दस प्राणों से भी परिचित हो चुके होंगे।

भारतीय शास्त्रीय संगीत के प्रचार व प्रसार में अनेक संगीतज्ञों का हाथ है। प्रस्तुत इकाई में कुछ प्रसिद्ध तबला वादकों के जीवन पर प्रकाश डाला जाएगा। भारतीय संगीत के क्षेत्र में उनकी गहन साधना और उनके विचारों को भी सविस्तार बताया गया है।

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप महान संगीतज्ञों(तबला वादकों) के महत्वपूर्ण योगदान को समझ सकेंगे तथा यह भी जान पाएंगे कि एक आम आदमी से एक संगीतज्ञ बनने का सफर कितना कठिन है।

4.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के बाद आप :–

- बता सकेंगे कि संगीतज्ञों (तबला वादकों) का भारतीय शास्त्रीय संगीत में क्या महत्व है।
- तबले के विद्वानों द्वारा रचित रचनाओं को जान सकेंगे।
- समझ सकेंगे कि संगीतज्ञ बनने के लिए कितने कठोर नियमों का पालन व संघर्ष करना पड़ता है।
- उनके जीवन से प्रेरण लेकर, उसी राह में अग्रसर हो पाएंगे।

4.3 संगीतज्ञों का जीवन परिचय

4.3.1 उ0 हबीबुद्दीन खां :–

जन्म – आपका जन्म सन् 1899 में मेरठ के एक संगीत परिवार में हुआ।

संगीत शिक्षा एवं कार्यक्रम – आपका सम्बन्ध अजराडा घराने के उस्ताद हस्सू खां से है। उस्ताद हस्सू खां के पुत्र उ0 शम्भू खां एवं इनके पुत्र उ0 हबीबुद्दीन खां हुए। उ0 हबीबुद्दीन खां ने अजराडे घराने की शिक्षा अपने पिता उस्ताद शम्भू खां से प्राप्त की। इसके अतिरिक्त आपने तबले की शिक्षा देहली घराने के उस्ताद नत्थू खां एवं फर्रूखाबाद घराने के उस्ताद मुनीर खां से भी प्राप्त की। इस प्रकार आपके वादन शैली में अजराडा, देहली एवं फर्रूखाबाद बाज एक गुलदस्ते के रूप में विद्यमान था। आप एकल वादन के साथ–साथ संगति में भी निपुण थे। उ0 हबीबुद्दीन खां, उस्ताद अहमदजान थिरकवा के समकालीन थे तथा इनकी आपस में स्वस्थ स्पर्धा भी रहती थी। आपने कई संगीत मंचों में अपनी कला का उत्कृष्ट प्रदर्शन किया है।

विशेषताएं – आपके वादन शैली की विशेषता दाएं एवं बाएं तबले की लड़न्त एवं बाएं तबले का विशेष प्रयोग था। घेघे तथा घेतक बोल आप बहुत तैयारी के साथ बजाया करते थे। घेतक बोल के प्रयोग से आपने फाक्ते (कबूतर) उड़ाने का बोल तैयार किया था, जो आपकी विशेष पहचान बन गया था। देहली घराने के कायदे भी आप तैयारी से बजाया करते थे।

<u>पुरस्कार एवं सम्मान</u> – लखनऊ संगीत सम्मेलन तथा नौचन्दी संगीत सम्मेलन मेरठ में आपको संगीत–सम्राट की उपाधि से अलंकृत किया गया था। आपको कई और पुरस्कारों से भी सम्मानित किया गया है।

<u>शिष्य परम्परा</u> – उस्ताद हबीबुद्दीन खां के केवल एक पुत्र मन्जु खां हैं। उस्ताद हबीबुद्दीन खां की वादन शैली की परम्परा को इनके पुत्र के अलावा इनके शिष्य सुधीर कुमार सक्सेना(बडौदा), हजारी लाल कत्थक(मेरठ), मनमोहन सिंह(दिल्ली), अमीर मोहम्मद खां, यशवन्त केलकर(मुंबई), महाराज बनर्जी(कलकत्ता), स्वामी दयाल(इलाहाबाद), गोवर्धन मालवीया, पप्पन खां, करन सिंह, राम प्रवेश सिंह(दरभंगा), रामधुर्व तथा सुन्दरलाल गंगानी कत्थक आदि आगे बढा़ रहे हैं।

<u>मृत्यु</u> – सन् 1965 में आपको पक्षाघात हुआ जिससे आपका वादन रूक गया और 1 जुलाई 1972 में आपका निधन हो गया।

4.3.2 पं0 स्वपन चौधरी :–

<u>जन्म</u> – पं0 स्वपन चौधरी का जन्म सन् 1947 में कोलकाता में हुआ था। आपके परिवार में संगीत का माहौल था।

<u>संगीत शिक्षा एवं कार्यक्रम</u> – आपने 5 वर्ष की उम्र से तबले की शिक्षा लेनी शुरू की। पं0 स्वपन चौधरी के गुरू पं. सन्तोष कृष्ण विश्वास थे। पं. सन्तोष जी तबले के लखनऊ घराने से संबंधित थे। स्वपन जी बाल्यावस्था से ही संगीत मंचों में अपने कार्यक्रम देने लगे। आपने सर्वप्रथम तानसेन संगीत प्रतियोगिता में भाग लिया एवं आपको इसमें प्रथम स्थान प्राप्त हुआ। उस समय आपकी उम्र सिर्फ 8 वर्ष थी। इसके पश्चात आप लगातार सफलता की सीढ़ियां चढते चले गए। आपने संगीत की अनेक प्रतियोगिताओं में प्रतिभाग किया एवं प्रथम स्थान प्राप्त किया। इनमें आकाशवाणी द्वारा आयोजित संगीत प्रतियोगिता भी शामिल थी। आपने देश के सभी प्रतिष्ठित संगीत मंचों में अपने तबला वादन का सफल प्रदर्शन किया है। आप संगीत के अन्तर्राष्ट्रीय मंचों पर भी अपनी प्रस्तुती दे चुके हैं और भारतीय शास्त्रीय संगीत का लोहा मनवाया है।

<u>विशेषताएं</u> – आप तबला वादन के दोनों पक्षों–एकल वादन व संगत में माहिर हैं। आपने भारतीय शास्त्रीय संगीत के लगभग सभी स्थापित कलाकारों के साथ संगत की है। जैसे उस्ताद अली अकबर खां, पंडित रवि शंकर, उस्ताद विलायत खान, पंडित निखिल बनर्जी, स्वर्गीय उस्ताद अमीर खान, उस्ताद अमजद अली खान, पंडित भीमसेन जोशी, पंडित जसराज, एल. शंकर, डॉ. बालमुरली कृष्ण, पंडित बिरजू महाराज, डॉ. एल. सुब्रमण्यम, लक्ष्मी शंकर, पंडित वी0जी0 जोग आदि। कुछ संगीतकारों जैसे स्व. उस्ताद अमीर खां, उस्ताद अली अकबर खां और स्व. पं0 निखिल बनर्जी के आप प्रिय तबला संगतकार रहें है। आपकी सांगीतिक सूझ–बूझ बडे कमाल की है और इसके लिए आप प्रसिद्ध हैं।

वर्तमान में पं0 स्वपन चौधरी जी अली अकबर कॉलेज ऑफ म्यूजिक, सैन रैफियल, कैलिफोर्निया में डायरेक्टार ऑफ द डिपार्टमेंट ऑफ परकशन(निदेशक, अवनद्ध वाद्य विभाग) के पद पर हैं। साथ ही साथ आप अली अकबर स्कूल ऑफ म्यूजिक, बाजल(Basel), स्विट्जरलैण्ड में तबला प्राध्यापक पद को भी संभाले हुए हैं। आप कैलिफोर्निया इंस्टिट्यूट ऑफ द आर्टस, वेलेंसिया, कैलिफोर्निया के शिक्षण स्टाफ के सदस्य भी हैं।

<u>पुरस्कार एवं सम्मान</u> – आपको सन् 1997 में संगीत नाट्क अकादमी पुरस्कार से सम्मानित किया गया। आपको अमेरिकन अकादमी का कलाकार पुरस्कार भी प्राप्त है।

4.3.3 पं0 कण्ठे महाराज :–

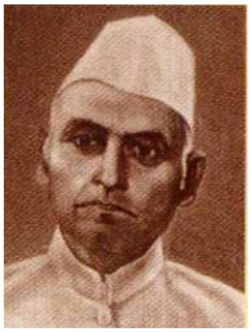

जन्म – आपका जन्म 1880 में वाराणसी में हुआ। कण्ठे महाराज की कर्मस्थलि वाराणसी रही।

संगीत शिक्षा एवं कार्यक्रम – कण्ठे महाराज का सम्बन्ध बनारस घराने के भैरो सहाय मिश्र की परम्परा से है जो कि बनारस घराने के संस्थापक पं. राम सहाय मिश्र के भतीजे थे। कण्ठे महाराज की तबले की शिक्षा भैरो सहाय मिश्र के पुत्र एवं शिष्य पं0 बलदेव सहाय के द्वारा हुई। पं0 बलदेव सहाय, पं. कण्ठे महाराज की बुआ के बेटे थे, अतः कण्ठे महाराज पं बलदेव सहाय को भैया जी कहकर सम्बोधित किया करते थे। कण्ठे महाराज ने बनारस घराने की वादन शैली के प्रचार एवं इसके विकास मे महत्वपूर्ण योगदान दिया। प्रारम्भ में तीन वर्षों तक आपकी शिक्षा पं. बलदेव सहाय जी से वाराणसी में हुई। पं. बलदेव सहाय द्वारा नेपाल दरबार में नौकरी करने के कारण एक वर्ष तक कण्ठे महाराज की शिक्षा में विघ्न आ गया। परन्तु इस बीच आपने अपने गुरू से प्राप्त शिक्षा पर कठोर परिश्रम किया एवं बाद में कण्ठे महाराज भी नेपाल चले गए। यहाँ पर कण्ठे महाराज की तबले की शिक्षा फिर से आरम्भ हो गई। नेपाल में कण्ठे महाराज ने चार वर्षों तक अपने गुरू के पास रहकर शिक्षा प्राप्त की एवं उनके संरक्षण में कठिन अभ्यास किया। कण्ठे महाराज बनारस घराने के प्रतिष्ठित गुरू एवं कलाकार के रूप में स्थापित हुए। पूरे भारतवर्ष में आपने तबला एकल वादन के कार्यक्रम के साथ अपने समकालीन गायक, वादक एवं नृत्यकार के साथ संगति कर संगीत जगत में शीर्ष स्थान प्राप्त किया।

विशेषताएं – कण्ठे महाराज के वादन में बनारस बाज की सभी विशेषताओं जैसे–उठान, चाल, बांट, परन आदि विद्यमान थी। इसके अतिरिक्त इन्होंने नृत्य से प्रभावित होकर तबले पर प्रयोग करने के लिए कई टुकड़े भी निर्मित किए, जिनका प्रयोग वर्तमान में कण्ठे महाराज के शिष्यों द्वारा सुंना जा सकता है। लग्गी–लडी बजाने में भी कण्ठे महाराज प्रवीण थे। कण्ठे महाराज तबला वादन वज्रासन की बैठक में किया करते थे, जिसका अनुसरण बनारस घराने के अधिकतम कलाकारों ने किया है।

पुरस्कार एवं सम्मान – आपको 1961 में संगीत नाटक अकादमी आवार्ड से सम्मानित किया गया। सन् 1954 में आपने आल इण्डिया तानसेन संगीत सम्मेलन में लगभग ढ़ाई घण्टे तक तबला वादन प्रस्तुत कर एक रिकार्ड बनाया एवं श्रोताओं को आश्चर्यचकित कर दिया था।

शिष्य परम्परा – कण्ठे महाराज ने अपने भतीजे पं. किशन महाराज को गोद ले लिया था तथा किशन महाराज को अपना सम्पूर्ण ज्ञान स्थानान्तरित किया। कण्ठे महाराज की बनारस बाज की परम्परा को पं. किशन महाराज के अतिरिक्त उनके शिष्यों आशुतोष भट्टाचार्य, विश्वनाथ घोष, रामभजनदास, रामनाथ मिश्र, बद्री प्रसाद, ननकु महाराज, शीतल प्रसाद मिश्र, शारदा सहाय, कृष्ण कुमार गांगुली, भगवान पांडे आदि ने आगे बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

मृत्यु – कण्ठे महाराज ने बनारस में 1 अगस्त 1969 में अन्तिम सांस ली।

अभ्यास प्रश्न

क) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए :–

1) उ0 हबीबुद्दीन खां ....घराने से संबंध रखते हैं।
2) पं0 स्वपन चौधरी को .... सन् में संगीत नाटक अकादमी आवार्ड से सम्मानित किया गया।
3) पं0 किशन महाराज के गुरू .... थे।

ख) लघु उत्तरीय प्रश्न :
1) उ0 हबीबुद्दीन खां का संक्षिप्त परिचय दीजिए।

4.4 सारांश

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप जान चुके होंगे कि संगीतज्ञों(तबला वादको) को कितने संघर्ष करने पढते हैं एक मुकाम तक पहुँचने में। शुरू से लेकर अन्त तक वे सिर्फ संगीत के बारे में सोचते हैं, संगीत की उपासना करते और सिर्फ संगीत ही प्रदान करते हैं। वे हमेशा इसी प्रयास में रहते हैं कि शास्त्रीय संगीत जन–जन तक कैसे पहुंचाया जाए और यह कैसे आम जन के बीच लोकप्रिय हो सके। संगीतज्ञ बनने के लिए आप में क्या–क्या गुण होने चाहिए यह भी आप इस इकाई से जान चुके होंगे।

4.5 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

क) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए :
1) अजराडा 2) 1997 3) पं0 कण्ठे महाराज

4.6 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1) मिश्र, पं0 विजयशंकर, *तबला पुराण*, कनिष्क पब्लिशर्स, नई दिल्ली।
2) मिश्र, पं0 छोटेलाल, *ताल प्रबन्ध*, कनिष्क पब्लिशर्स, नई दिल्ली।
3) गर्ग, श्री लक्ष्मीनारायण, *हमारे संगीत रत्न*, संगीत कार्यालय, हाथरस, उ0प्र0।
4) साभार गूगल।

4.7 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1) वसन्त, *संगीत विशारद*, संगीत कार्यालय, हाथरस, उ0प्र0।
2) श्रीवास्तव, श्री गिरीश चन्द्र, *ताल परिचय – 2*, संगीत सदन प्रकाशन, इलाहाबाद।

4.8 निबन्धात्मक प्रश्न

1) पं0 कण्ठे महाराज के जीवन पर प्रकाश डालते हुए उनकी वादन शैली का उल्लेख कीजिए।
2) पं0 स्वपन चौधरी का जीवन परिचय दीजिए।

इकाई 5 – संगीत संबंधी विषयों पर निबन्ध

5.1 प्रस्तावना

5.2 उद्देश्य

5.3 निबन्ध की व्याख्या

5.4 निबन्ध के अवयव

5.4.1 भूमिका

5.4.1.1 संगीत शिक्षा विषय की भूमिका

5.4.2 विषय वस्तु

5.4.2.1 गुरूमुख द्वारा संगीत शिक्षा

5.4.2.2 संगीत संस्थाओं द्वारा संगीत शिक्षा

5.4.2.3 विद्यालय एवं विश्वविद्यालयों में संगीत शिक्षा

5.4.3 उपसंहार – संगीत शिक्षा विषय पर

5.5 सारांश

5.6 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

5.7 निबन्धात्मक प्रश्न

5.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0 संगीत के पाठ्यक्रम बी0ए0एम0टी0(एन)—202 की पांचवीं इकाई है। इससे पहले की इकाईयों में आप भारतीय संगीत के प्राचीन इतिहास के विषय में जान गए होंगे। आप तबले के विभिन्न घरानों, इनकी वादन शैलियों एवं तबला वादकों के विषय में जान गए होंगे। साथ ही आप ताल के दस प्राणों से भी परिचित हो चुके होंगे।

इस इकाई में निबन्ध लेखन के विषय में आपको कुछ महत्वपूर्ण तथ्यों से अवगत कराया जाएगा। निबन्ध लिखते समय किन—किन बातों पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता होती है यह भी इस इकाई में वर्णित है।

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप निबन्ध लेखन की विधि तथा निबन्ध लेखन के अवयवों से परिचित होंगे। आप किसी भी विषय पर निबन्ध लिखने में सक्षम हो सकेंगे।

5.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप :—

- निबन्ध लेखन के अवयवों का सही प्रयोग कर सकेंगे।
- अपनी लेखन शैली का विकास कर सकेंगे।
- किसी भी विषय में आप व्यवस्थित रूप से निबन्ध प्रस्तुत कर सकेंगे।

5.3 निबन्ध की व्याख्या

निबन्ध के विषय में आपने पूर्व में काफी सुना है तथा प्राथमिक कक्षाओं से ही निबन्ध लेखन का अभ्यास कराया जाता है। प्रत्येक स्तर पर निबन्ध का स्तर भी पृथक होता है। निबन्ध किसी विषय विशेष की समग्र रूप में व्यवस्थित व्याख्या है। निबन्ध में विषय से सम्बन्धित समस्त पहलुओं पर विचार प्रस्तुत किए जाते हैं। अतः निबन्ध में विषय की व्याख्या का स्वरूप व्यापक हो जाता है। विषय से सम्बन्धित पूर्व की उपलब्ध जानकारी को निबन्ध में समाहित कर उसका विश्लेषण किया जाता है और लेखक समालोचना के लिए भी स्वतंत्र रहता है। निबन्ध के माध्यम से लेखक व्याप्त भ्रान्तियों को भी दूर करने की चेष्टा करता है। इसी सन्दर्भ में निबन्ध और लेख के अन्तर को भी समझने की आवश्यकता है।

लेख प्रायः समस्या को लेकर आरम्भ किया जाता है एवं समस्या का निराकरण ही किसी लेख का मूल उद्देश्य रहता है। विद्यालय स्तर पर आपको दृश्यों का आंखों देखा वर्णन निबन्ध के रूप में लेखन का अभ्यास करवाया गया होगा। परन्तु विश्वविद्यालय स्तर पर निबन्ध, विषय से ही सम्बन्धित रहता है और उस विषय के बारे में आपको समस्त जानकारी और यदि आवश्यक हो तो गुण—दोष के साथ प्रस्तुत करने की आवश्यकता होती है। लेख सामान्य विषय पर वक्तव्य रूप में रहता है। निबन्ध लेखन अभ्यास से ही आप लेख लिखने एवं शोध पत्र लिखने में भी सक्षम होते हैं। अतः निबन्ध लेखन के अभ्यास से आपकी लेखन क्षमता बढ़ती है और आप अपने विचारों को कलम के माध्यम से प्रस्तुत करने की तकनीक भी विकसित कर पाते हैं।

5.4 निबन्ध के अवयव

किसी भी विषय पर निबन्ध को प्रायः निम्न भागों में बांटकर विषय की व्याख्या प्रस्तुत करते हैं।

1. भूमिका 2. विषयवस्तु 3. उपसंहार

5.4.1 भूमिका – इसके अन्तर्गत विषय के बारे में जानकारी देते हुए व्याख्या के अन्तर्गत आने वाले सन्दर्भों के बारे में बताते हैं। भूमिका के माध्यम से निबन्ध का स्वरूप पता चल जाता है। व्याख्या किन–किन बिन्दुओं पर केन्द्रित होनी है इसका संक्षिप्त परिचय भी भूमिका के माध्यम से दिया जाता है। भूमिका में विषय प्रवेश प्रस्तुत किया जाता है अर्थात विषय क्या है एवं विषय पर निबन्ध के माध्यम से हम विषय के सन्दर्भ में क्या–क्या चर्चा करेंगे।

उदाहरण के रूप में संगीत शिक्षा विषय के माध्यम से आपको निबन्ध की लेखन शैली से परिचित कराएंगे।

5.4.1.1 संगीत शिक्षा विषय पर भूमिका – प्राचीन काल से ही संगीत का सन्दर्भ हमें सामवेद से प्राप्त होता है तथा वैदिक समय में ऋचाओं के गान की शिक्षा गुरूमुख से देने की परम्परा थी और इस परम्परा का निर्वाह काफी समय तक रहा। संगीत का वास्तविक स्वरूप क्रियात्मक है। अतः इसकी शिक्षा भी क्रियात्मक रूप में देने से ही संगीत का स्वरूप स्पष्ट हो पाता है। यद्यपि संगीत से सम्बन्धित अवयवों की व्याख्या समय–समय पर विभिन्न संगीत मनीषियों के द्वारा दी जाती रही है परन्तु संगीत को क्रियात्मक स्वरूप में प्रस्तुत करने के लिए शिष्य को गुरूमुख से ही शिक्षा ग्रहण करना होती थी जिसके लिए गुरूकुल की व्यवस्था रहती थी। वर्तमान में संगीत शिक्षा का स्वरूप बदल चुका है जिसकी चर्चा आगे की जाएगी। संगीत को विषय के रूप में समझा जाने लगा है जिससे उसकी शिक्षा भी उसी के अनुरूप होने लगी है। जबकि संगीत को कला के रूप में ही समझने की आवश्यकता है। वर्तमान में संगीत हेतु शिक्षा के विभिन्न माध्यमों का अध्ययन कर उनके गुण दोष पर इस निबन्ध के माध्यम से विचार किया जाएगा।

संगीत शिक्षा विषय पर निबन्ध की भूमिका उदाहरण स्वरूप आपके लिए प्रस्तुत की गई है जिससे आप किसी भी विषय पर निबन्ध हेतु भूमिका लिखने में सक्षम हो पाएंगे।

5.4.2 विषयवस्तु – भूमिका के पश्चात निबन्ध के विषय की विषय वस्तु प्रस्तुत की जाती है जिसमें विषय से सम्बन्धित सभी सन्दर्भों को प्रस्तुत किया जाता है। किसी विषय पर विषयवस्तु किस प्रकार लिखी जाती है इसका ज्ञान संगीत शिक्षा विषय पर उदाहरण स्वरूप प्रस्तुत विषयवस्तु से जान सकेंगे।
संगीत शिक्षा विषय की विषयवस्तु – पहले संगीत की शिक्षा गुरूमुख से ही प्राप्त की जाती थी। परन्तु बाद में संगीत शिक्षा के नए स्वरूप भी स्थापित हुए। संगीत शिक्षा स्वरूप निम्न प्रकार हैः–

1. गुरूमुख द्वारा संगीत शिक्षा।
2. संगीत संस्थाओं द्वारा संगीत शिक्षा।
3. विद्यालयों एव विश्वविद्यालयों द्वारा संगीत शिक्षा।

5.4.2.1 गुरूमुख द्वारा संगीत शिक्षा – संगीत की शिक्षा शिष्य द्वारा गुरू के पास रहकर ही प्राप्त की जाती थी। इस शिक्षा पद्धति में शिष्य को अनुशासित होकर शिक्षा प्राप्त करनी होती थी। गुरू द्वारा

शिष्य की लगन, धैर्य आदि को परखकर शिष्य को स्वीकार किया जाता था। गुरू द्वारा शिष्य को स्वीकार करने के पश्चात शिष्यत्व की औपचारिक घोषणा 'गंडा रस्म' अदायगी के साथ होती थी। इसमें गुरू और शिष्य एक दूसरे को 'धागा' बाँधकर प्रतिबद्धता का संकल्प लेते थे। इस प्रकार की शिक्षा में कोई निश्चित पाठ्यक्रम नहीं होता था और न ही संगीत शिक्षा की समयावधि निश्चित होती थी। गुरू द्वारा शिष्य की क्षमता के आधार पर ही शिक्षा दी जाती थी। एक ही गुरू के कई शिष्य होते थे। परन्तु यह आवश्यक नहीं था कि सबको एक ही शिक्षा दी जाए। दी हुई संगीत शिक्षा का अभ्यास भी गुरू के निर्देशन में ही होता था। संगीत शिक्षा के अतिरिक्त संगीत सुनने का मार्ग निर्देशन का उद्देश्य यह था कि शिष्य अपना विवेक एवं धैर्य न खो बैठे। इस प्रकार की शिक्षा में धैर्य का बहुत महत्व था और लगन से गुरू द्वारा दिए गए अभ्यास के नियमों से कठिन अभ्यास करने की आवश्यकता होती थी। गुरू जब तक शिष्य को कार्यक्रम प्रस्तुत करने के अनुकूल नहीं समझता था तब तक शिष्यों को कार्यक्रम प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं होती थी। बल्कि शिष्य को कार्यक्रम के योग्य समझने के पश्चात शिष्य को संगीतकारों के मध्य प्रस्तुत किया जाता था जिससे वह सभी संगीतज्ञों का आशीर्वाद प्राप्त करें। इस प्रकार की संगीत शिक्षा में शिष्य, गुरू के सानिध्य में संगीत के गूढ़ रहस्यों को जानता था। संगीत में घराने स्थापित हुए एवं घरानों की शिक्षा इस संगीत शिक्षा पद्धति में ही सम्भव थी। शिष्य अपने गुरू के घराने से सम्बन्धित हो जाता था और उस घराने का प्रतिनिधित्व प्राप्त करने में अपना गौरव समझता था।

5.4.2.2 संगीत संस्थानों द्वारा संगीत शिक्षा – आधुनिक समय में संगीत संस्थानों का महत्व बढ़ गया है। पंडित विष्णुनारायण भातखण्डे एवं विष्णुदिग्बर पलुस्कर ने संगीत शिक्षा का प्रचार इस प्रकार किया जिससे संगीत क्रियात्मक रूप में विकसित होने लगा। गुरूमुख शिक्षा पद्धति में बहुत कम लोग ही शिक्षा प्राप्त कर पाते थे। अतः दो संगीत मनीषियों ने संगीत के अधिक प्रचार एवं प्रसार हेतु संगीत संस्थानों की कल्पना कर पंडित विष्णु नारायण भातखण्डे द्वारा लखनऊ में 'मैरिस कालेज आफ म्यूजिक' एवं विष्णुदिगम्बर पलुस्कर द्वारा पूना में 'गन्धर्व मंडल' की स्थापना की गई जिसके अन्तर्गत देश के कई शहरों में 'गन्धर्व संगीत महाविद्यालय' के नाम से संगीत शिक्षण संस्थान खोले गए। यह संगीत शिक्षण की औपचारिक व्यवस्था का आरम्भ था। इन संस्थानों में प्रत्येक वर्ष के लिए पाठ्यक्रम निश्चित किए गए तथा वर्ष के अन्त में परीक्षा की भी व्यवस्था की गई। इन संस्थानों में संगीत के गुणीजन, गुरू अथवा उस्तादों को संगीत शिक्षा हेतु आमंत्रित किया गया और इनके लिए किसी प्रकार के औपचारिक प्रमाण–पत्रों की बाध्यता नहीं रखी गई ।

संगीत के विद्यार्थियों को परीक्षा में सफल होने पर औपचारिक प्रमाण–पत्र देने की व्यवस्था भी की गई। संगीत की हर विधा और हर अंग के लिए विशेषज्ञ रखे गए। प्रतिदिन संगीत शिक्षा का समय भी निर्धारित किया गया तथा अन्य संस्थानों की भाँति इन संस्थानों में भी उत्सव एवं त्यौहारों पर अवकाश का प्राविधान था। जबकि गुरूमुख शिक्षा पद्धति में इस प्रकार की व्यवस्था नहीं रहती थी और शिष्य को गुरू के पास रहकर ही सीखना होता था और गुरू द्वारा शिष्य को किसी समय भी शिक्षा के लिए बुला लिया जाता था जिसमें शिष्य को उपस्थित होना आवश्यक होता था। संगीत संस्थानों की शिक्षा में शिष्य गुरू के सानिध्य में निश्चित समय के लिए ही रहता है और प्राप्त की गई शिक्षा का अभ्यास स्वयं घर पर ही करता है। संगीत संस्थानों की शिक्षा पद्धति में गुरू का शिष्य के ऊपर नियंत्रण गुरूमुखी शिक्षा पद्धति की अपेक्षा कम रह पाता है। प्रारम्भ में इन संस्थानों में संगीत की शिक्षा हेतु पाँच से छः वर्षों का पाठ्यक्रम निर्धारित किया गया। संस्थानों में पाँच, छः वर्ष की शिक्षा प्राप्त

करने के उपरान्त भी यह माना गया कि इसके पश्चात भी शिष्य को गुरू के सानिध्य की निरन्तर आवश्यकता रहती है। इन दो संस्थानों की स्थापना के पश्चात प्रयाग(इलाहाबाद) में 'प्रयाग संगीत समिति' एवं पंजाब के चंडीगढ़ क्षेत्र में प्राचीन कला संगीत संस्थान की स्थापना हुई। इन सभी संस्थानों ने देश के भिन्न–भिन्न शहरों में अपने केन्द्र स्थापित किए। यद्यपि इन केन्द्रों पर शिक्षा का प्रचार हुआ एवं विद्यार्थियों को प्रमाण–पत्र मिलने लगे।

गुरूमुखी शिक्षा में गुरू एवं शिष्य दोनों का ही लक्ष्य कलाकार बनना तथा बनाना होता था जिसके लिए शिष्य द्वारा अनुशासित अभ्यास किया जाता था और संगीत ही एकमात्र लक्ष्य रहता था। संगीत संस्थानो में ऐसे भी विद्यार्थी शिक्षा लेते थे जिनका लक्ष्य केवल संगीत ही नहीं होता था बल्कि संगीत की शिक्षा शौकिया रूप में लेते थे। अतः संगीत संस्थानों में संगीत के विद्यार्थियों को समूह में एकरूपता नहीं रहती थी। गुरू द्वारा भी एक ही कक्षा के समस्त विद्यार्थियों को लगभग एक जैसी ही शिक्षा दी जाती थी जो कि संस्थानों के शिक्षा व्यवस्था की आवश्यकता एवं सीमा भी थी। अतः संगीत संस्थानों से शिष्य उस प्रकार की शिक्षा ग्रहण नहीं कर पाते थे जिस प्रकार की शिक्षा गुरू शिष्य परम्परा पद्धति में प्राप्त होती थी। संगीत संस्थानों का उद्देश्य संगीत शिक्षा के माध्यम से संगीत का प्रचार एवं प्रसार था और यह सामान्य रूप से संस्थानों के उदेद्श्य के बारे में कहा जाता था कि संस्थान तानसेन नहीं तो कानसेन तो बना ही देते हैं। अर्थात संगीत कलाकार न भी बन पाएं तो एक संगीत का अच्छा श्रोता तो बन ही जाता है। इन संगीत संस्थानों ने विभिन्न शहरों में अपने परीक्षा केन्द्र खोले जहाँ पर संगीत शिक्षा देने का भी प्रावधान किया गया तथा विद्यार्थी इन केन्द्रों से संगीत सीखकर प्रमाण–पत्र प्राप्त करने लगे। इन प्रमाण–पत्रों को सरकार के शिक्षा निदेशालय द्वारा मान्यता प्रदान की गई।

विद्यालयों में बिना इन संस्थानों के प्रमाण–पत्र के नियुक्तियाँ नहीं होती हैं। विद्यालय स्तर पर शिक्षक के लिए अन्य विषयों में बी. एड. अनिवार्य अर्हता है परन्तु संगीत विषय में शिक्षक होने के लिए बी.एड. के स्थान पर 'संगीत विशारद' एवं 'संगीत प्रभाकर' होना आवश्यक है जो कि इन संस्थानों द्वारा दिया गया प्रमाण पत्र है। इस व्यवस्था से इन केन्द्रों पर संगीत के प्रमाण पत्र प्राप्त करने के लिए विद्यार्थियों की भीड़ बढ़ गई। इन संगीत संस्थानों में शिक्षा प्राप्त करने के पश्चात कलाकार बनने के इच्छुक विद्यार्थियों को गुरू शिष्य परम्परा के अन्तर्गत ही शिक्षा लेना अनिवार्य रहता है इन संस्थानों द्वारा सामान्य संगीत के जिज्ञासु एवं विद्यार्थियों ने संगीत के प्रचार–प्रसार में महत्वपूर्ण योगदान दिया।

5.4.2.3 विद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों द्वारा संगीत शिक्षा – स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात विद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों में संगीत विषय अन्य विषयों की भाँति संगीत विषय पाठ्यक्रम में शामिल किया गया। विद्यालय एवं विश्वविद्यालयों में संगीत विषय का पाठ्यक्रम तैयार कर समय–सारिणी में वादन (पीरियड) शिक्षण के लिए निश्चित किया गया। इनमें शिक्षण पाठ्यक्रम के अनुसार ही दिया जाता है और अध्यापक द्वारा सब विद्यार्थियों को समान रूप से ही अध्यापन कराया जाता है। स्नातक स्तर तक एक वादन प्रायः 45 मिनट का होता है जो कि संगीत की व्यवहारिकता के अनुकूल नहीं है क्योंकि 45 मिनट के अन्दर ही वाद्यों को स्वर में करना सम्भव नहीं हो पाता है। अतः देखा जा रहा है कि विश्वविद्यालय स्तर पर भी संगीत की मूल आवश्यकता वाद्यों को स्वर में करना विद्यार्थी पूर्ण से नहीं सीख पाते हैं। स्नातक स्तर तक विद्यालय एवं विश्वविद्यालयों में विद्यार्थियों को संगीत विषय के अतिरिक्त अन्य विषयों का भी अध्ययन करना होता है। अतः विद्यार्थी संगीत के प्रति पूर्ण समर्पित नहीं

हो पाता है। संगीत की आवश्यकता होती है, जिसमें अधिक से अधिक समय देने से ही संगीत कला को समझा जा सकता है।

विद्यालय, विश्वविद्यालय में संगीत विषय प्रारम्भ होने से संगीतज्ञों को व्यवसाय तो प्राप्त हुआ परन्तु इससे संगीत शिक्षा की गुणात्मकता पर प्रभाव पड़ा। यद्यपि विद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों में संगीत के विद्वान भी नियुक्त हुए परन्तु इन संस्थानों की व्यवस्था में उतने समय के लिए संगीत शिक्षक भी सीमा में बँध गए। संगीत संस्थानों में गुरू परम्परा पद्धति में शिष्य पूर्ण रूप से संगीत के वातावरण में रहता था और संगीत संस्थानों में भी जितने समय के लिए वह संस्थान में है उतने समय तक वह संगीत के वातावरण में रहता था। परन्तु विद्यालय और विश्वविद्यालय में विद्यार्थी केवल संगीत के वादन (पीरियड) में ही संगीत के वातावरण से जुड़ा रहता है। विद्यालयों, विश्वविद्यालयों से उपाधि सामान्य रूप में मिलती है जिसमें संगीत एक विषय के रूप में रहता है जबकि संगीत संस्थानों में मिलने वाली उपाधि एवं प्रमाण पत्र केवल संगीत का ही मिलता है और गुरू—शिष्य परम्परा में तो कोई औपचारिक प्रमाण—पत्र नहीं होता है। इसमें शिष्य स्वयं अपनी शिक्षा का प्रमाण प्रस्तुत करता है। विश्वविद्यालय एवं महाविद्यालयों में संगीत विषय शिक्षा, स्नातकोत्तर उपाधि के लिए दी जाने लगी है, जिसमें केवल संगीत विषय का ही अध्ययन विद्यार्थी को करना होता है।

विश्वविद्यालय स्तर पर केवल स्नातकोत्तर कक्षाओं में ही विद्यार्थी संगीत के वातावरण में रहता है जो मात्र दो वर्ष के पाठ्यक्रम में निबद्ध होता है। संगीत की शिक्षा गुणात्मकता के साथ स्नातकोत्तर स्तर पर ही हो पाती है जिसका स्वरूप संगीत संस्थानों की शिक्षा जैसा रहता है। स्नातकोत्तर कक्षाओं में विद्यार्थियों को संगीत के अध्ययन और अभ्यास का समय प्राप्त होता है। विश्वविद्यालय स्तर पर स्नातक की कक्षाओं में संगीत विषय का विद्यार्थी सीमित समय जो कि उसके लिए समय सारिणी में निश्चित किया गया उसमें ही संगीत शिक्षक के सम्पर्क में रहता है। इसी उपलब्ध समय में शिक्षक का उद्देश्य निर्धारित पाठ्यक्रम पूरा करने का भी होता है। अतः गुरू शिष्य परम्परा पद्धति एवं संगीत संस्थान द्वारा शिक्षा पद्धति की तुलना में विश्वविद्यालय द्वारा दी जाने वाली संगीत शिक्षा की गुणवत्ता में कमी रहती है। स्नातकोत्तर में भी यही स्थिति रहती है परन्तु इसमें विद्यार्थी तथा शिक्षक के पास संगीत विषय के लिए अधिक समय रहता है।

संगीत के जिज्ञासु विद्यार्थी विश्वविद्यालय शिक्षा के अतिरिक्त संगीत संस्थानों एवं गुरू की सहायता भी प्राप्त करते हैं। संगीत में शिक्षक बनने हेतु विश्वविद्यालय प्रमाण—पत्र की आवश्यकता होती है अतः विद्यार्थी संगीत हेतु विश्वविद्यालय में प्रवेश लेता है। केवल विश्वविद्यालय की संगीत शिक्षा से विद्यार्थी का कलाकार बनना कठिन है और न ही विश्वविद्यालय का यह उदे्श्य ही है। विश्वविद्यालय में विद्यार्थियों को संगीत पढ़ाने का उद्देश्य है कि विषय से सम्बन्धित आयामों से विद्यार्थी को परिचित कराया जा सके जिससे वह भविष्य के लिए अपने विकल्प चुन सके।

विश्वविद्यालय की उपाधि प्रमाण—पत्र का महत्व संगीत की शिक्षक अर्हता के रूप में ही है। व्यवसायिक कलाकार बनने में इसका कोई महत्व नहीं है। विद्यालय एवं विश्वविद्यालय स्तर पर संगीत शिक्षक हेतु अर्हताएं एवं विश्वविद्यालय स्तर पर संगीत शिक्षक हेतु अर्हताएं व्यवहारिक नहीं हैं जिससे इनमें सदैव योग्य संगीत शिक्षक नियुक्त नहीं हो पाते हैं। संगीत विषय मुख्य रूप से क्रियात्मक विषय है परन्तु नैट की परीक्षा जो कि विश्वविद्यालय में संगीत शिक्षक के लिए पास करना अनिवार्य अर्हता है। परन्तु इस परीक्षा में संगीत विषय हेतु विद्यार्थी के क्रियात्मक ज्ञान को नहीं परखा जाता है जबकि संगीत विषय के शिक्षक के लिए क्रियात्मक ज्ञान होना आवश्यक है।

अभी तक आपने संगीत शिक्षा विषय पर निबन्ध हेतु भूमिका एवं विषय वस्तु का अध्ययन किया जो कि निबन्ध लेखन के लिए उदाहरण स्वरूप आपको बताया गया। किसी विषय के निबन्ध पर उपसंहार लिखने के विषय में संगीत शिक्षा विषय निबन्ध पर नीचे लिखे गए उपसंहार से समझेंगे।

5.4.3 उपसंहार संगीत शिक्षा विषय पर – संगीत शिक्षा गुरू शिष्य परम्परा, संगीत संस्थानो के माध्यम से विद्यालय एवं विश्वविद्यालय में एक विषय के रूप में दी जाती है। गुरू शिष्य परम्परा में गुरू और शिष्य के मध्य अटूट सम्बन्ध बन जाता है और शिष्य गुरू के सानिध्य में रहकर संगीत के गूढ़ रहस्यों को सीखता है। इसमें गुरू एवं शिष्य दोनों का उद्देश्य कलाकार बनाना तथा बनना होता है। संगीत संस्थानों में भी केवल संगीत शिक्षा दी जाती है जिसमें विद्यार्थी सीमित समय के लिए ही गुरू के सम्पर्क में रहता है और विश्वविद्यालय शिक्षा में स्नातक स्तर पर तो बहुत ही कम समय के लिए विद्यार्थी संगीत के वातावरण में रहता है। परन्तु संगीत शिक्षक बनने हेतु संस्थानों एवं विश्वविद्यालय में प्रमाण–पत्रों की आवश्यकता होती है।

संगीत के जिज्ञासु विद्यार्थियों के लिए यह आवश्यक है कि वह संस्थानों की शिक्षा अथवा विश्वविद्यालय की शिक्षा के साथ गुरू शिष्य परम्परा पद्धति में भी किसी गुरू से शिक्षा प्राप्त करे जिससे उसके पास संगीत शिक्षक का व्यवसाय अथवा व्यवसायिक कलाकार बनने का विकल्प रहेगा। उपरोक्त कथन से यह निष्कर्ष न निकाला जाए कि विश्वविद्यालय संगीत शिक्षा से ही अच्छा संगीत शिक्षा बन सकता है जबकि संगीत की सही शिक्षा प्राप्त ही अच्छा शिक्षक बनेगा। वर्तमान व्यवस्था में संगीत शिक्षक हेतु सभी माध्यमों का अपना महत्व है अतः विद्यार्थी को अपने निश्चित उद्देश्य के लिए इनका चयन करने की आवश्यकता है।

संगीत शिक्षा विषय पर निबन्ध के माध्यम से आपने निबन्ध लेखन के विषय में अध्ययन किया। कुछ अन्य संगीत सम्बन्धित विषयों की सूची दी जा रही है।

अभ्यास हेतु निबन्ध के विषय

1. फिल्मो में संगीत
2. संगीत में इलक्ट्रॉनिक उपकरणों का योगदान
3. लोक संगीत एवं शास्त्रीय संगीत
4. भक्ति एवं संगीत
5. संगीत एवं अध्यात्म
6. संगीत एवं संचार माध्यम (रेडियो व टी0वी0)
7. संगीत में अवनद्य वाद्यों की भूमिका
8. संगीत गोष्ठी

जैसा कि आपको बताया जा चुका है कि प्रत्येक विषय के निबन्ध का आरम्भ भूमिका से किया जाता है और निबन्ध का समापन उपसंहार से किया जाता है। उपरोक्त विषयों की विषयवस्तु नीचे दी जा रही है जिसके आधार पर आप इन विषयों पर निबन्ध लिख सकेंगे।

1. <u>फिल्मों में संगीत</u>
   - विषयवस्तु
   - फिल्म में संगीत का प्रयोग
   - पार्श्व गायन
   - फिल्म में वाद्यों का प्रयोग
   - गायन के साथ वाद्यों का प्रयोग

- पार्श्व संगीत में वाद्यों का प्रयोग
- फिल्मों में संगीत का स्थान एवं उपयोगिता

2. <u>संगीत में इलक्ट्रॉनिक उपकरणों का योगदान</u>
   - विषयवस्तु
   - संगीत में प्रयोग होने वाले इलक्ट्रोनिक उपकरण

   (अ) – इलक्ट्रॉनिक तानपुरा
   (ब) – इलक्ट्रॉनिक तबला
   (स) – इलक्ट्रॉनिक लहरा मशीन
   - संगीत के संरक्षण एवं शिक्षा में सहायक इलक्ट्रॉनिक उपकरण

   1. ग्रामोफोन 2. टेपरिकार्डर

3. <u>लोक संगीत एवं शास्त्रीय संगीत</u>
   - विषयवस्तु
   - लोक संगीत की पृष्ठभूमि
   - शास्त्रीय संगीत का परिचय
   - लोक संगीत एवं शास्त्रीय संगीत का सम्बन्ध

4. <u>भक्ति एवं संगीत</u>
   - विषयवस्तु
   - भक्ति की व्याख्या
   - विभिन्न धर्मों में भक्ति हेतु संगीत का प्रयोग

   1. हिन्दू 2. मुस्लिम 3. सिख 4. इसाई

5. <u>संगीत एवं आध्यात्म</u>
   - विषयवस्तु
   - संगीत की उत्पत्ति
   - वैदिक कालीन संगीत
   - आध्यात्म में संगीत का महत्व

6. <u>संगीत एवं संचार माध्यम</u>
   - विषयवस्तु
   - रेडियो में संगीत
   - टेलीविजन में संगीत
   - रेडियो तथा टेलीविजन का संगीत के प्रचार–प्रसार में भूमिका

7. <u>संगीत में अवनद्य वाद्य की भूमिका</u>
   - विषयवस्तु
   - संगीत का परिचय
   - संगीत के तत्व
   - संगीत के अवनद्य वाद्य
   - संगीत में अवनद्य वाद्यों का प्रयोग

8. <u>संगीत गोष्ठी</u>
   - विषयवस्तु
   - संगीत गोष्ठी का परिचय
   - संगीत गोष्ठी में कलाकार की भूमिका
   - विभिन्न प्रकार की संगीत गोष्ठी
   - संगीत गोष्ठी के श्रोता

उपरोक्त कुछ विषय आपके निबन्ध लेखन के अभ्यास के लिए दिए गए हैं। इन सभी विषयों पर आप निबन्ध लिखने का अभ्यास ऊपर अध्ययन कराई विधि के अनुसार करेंगे। सभी विषयों पर निबन्ध के अवयव का क्रम भूमिका, विषयवस्तु एवं उपसंहार रहेगा। उपसंहार एवं भूमिका के प्रभावशाली होने से आपका निबन्ध उच्चस्तर का होता है यद्यपि विषय वस्तु भी महत्वपूर्ण है। उपसंहार में विषय वस्तु में की गई चर्चाओं अथवा विवरणों से प्रकट तथ्यों को परिणाम स्वरूप में प्रस्तुत किया जाता है। आप को इन सबका ज्ञान संगीत शिक्षा विषय पर उदाहरण स्वरूप निबन्ध के माध्यम से दिया गया है। अतः उसी आधार पर आप उपरोक्त विषयों पर निबन्ध लेखन का अभ्यास करें।

5.5 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप निबन्ध लेखन की शैली से परिचित हो चुके होंगे। संगीत विषयों पर निबन्ध लेखन की शैली एवं विद्या से आपको इस इकाई के माध्यम से परिचित कराया गया। निबन्ध लेखन से आप अपने विचारों को लेखन के माध्यम से प्रकट करने की तकनीक विकसित करते हैं जो बाद में आपको शोधपत्र, लेख एवं शोध कार्य में सहायक सिद्ध होगी। उदाहरण स्वरूप दिए गए संगीत शिक्षा विषय पर निबन्ध से आप संगीत विषयों पर निबन्ध लेखन के विषय जान गए हैं एवं संगीत विषय पर लिखने में सक्षम होंगे। संगीत के गहन अध्ययन एवं संगीत के सन्दर्भों के अध्ययन से आप संगीत विषयों पर निबन्ध लिखने में सक्षम हो गए होंगे।

5.6 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. वसन्त, *संगीत विशारद*, संगीत कार्यालय, हाथरस।
2. गर्ग, श्री लक्ष्मीनारायण, *निबन्ध संगीत*, संगीत कार्यालय, हाथरस।

5.7 निबन्धात्मक प्रश्न

1. इकाई में दिए गए अभ्यास हेतु निबन्ध विषयों में से किसी एक विषय पर निबन्ध लेखन कीजिए।

इकाई 6 – पाठ्यक्रम की तालों आडाचारताल,गजझम्पा ताल एवं तीवरा ताल का परिचय एवं बोल समूह द्वारा ताल पहचानना, पाठ्यक्रम की तालों आडाचारताल,गजझम्पा ताल एवं तीवरा ताल के ठेकों को दुगुन, तिगुन एवं चौगुन लयकारी सहित लिपिबद्ध करना।

6.1 प्रस्तावना
6.2 उद्देश्य
6.3 पाठ्यक्रम की तालों का परिचय
6.3.1 आडाचारताल का परिचय
6.3.2 गजझम्पा ताल का परिचय
6.3.3 तीवरा ताल का परिचय
6.4 तालों को लयकारियों में लिपिबद्ध करना
6.4.1 आडाचारताल की लयकारियां
6.4.2 गजझम्पा ताल की लयकारियां
6.4.3 तीवरा ताल की लयकारियां
6.5 सारांश
6.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
6.7 संदर्भ ग्रन्थ सूची
6.8 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
6.9 निबन्धात्मक प्रश्न

6.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0 संगीत के पाठ्यक्रम बी0ए0एम0टी0(एन0)–202 की छठी इकाई है। इससे पहले की इकाईयों में आप भारतीय संगीत के प्राचीन इतिहास के विषय में जान गए होंगे। आप तबले के विभिन्न घरानों, इनकी वादन शैलियों एवं तबला वादकों के विषय में जान गए होंगे। साथ ही आप ताल के दस प्राणों से भी परिचित हो चुके होंगे। आप विद्वान संगीतज्ञों के महत्वपूर्ण योगदान तथा उनकी संगीत साधना के प्रति लगन एवं परिश्रम को जान चुके होंगे। साथ ही आप निबन्ध लेखन के विषय में भी जान चुके होंगे।

इस इकाई में आप संगीत में प्रयुक्त होने वाली पाठ्यक्रम की तालों का परिचय प्राप्त करेंगे। इस इकाई में तालों के विभिन्न ठेकों एवं उनको विभिन्न लयकारियों में लिखना भी समझाया गया है।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप ताल की संरचना एवं स्वरूप को समझ सकेंगे जिससे आप इनका उपयोग संगीत में भली–भांति कर पाएंगे। आप तालों को भातखण्डे ताललिपि पद्धति के अनुसार विभिन्न लयकारियों में लिखना भी सीख सकेंगे।

6.2 उददे्श्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप :–

- तालों की संरचना एवं स्वरूप को समझ पाएंगे।
- तालों के भिन्न–भिन्न उपयोग भी समझ सकेंगे।
- तालों के विभिन्न ठेकों को जान पाएंगे।
- तालों को विभिन्न लयकारियों में लिखना सीख सकेंगे।

6.3 पाठ्क्रम की तालों का परिचय

6.3.1 आडाचारताल का परिचय – आडाचारताल चौदह मात्रा की तबले पर बजने वाली ताल है जिसका प्रयोग विलम्बित एवं मध्य लय में किया जाता है। एकताल की भांति अति विलम्बित लय में इसका प्रयोग नही होता है। इसमें गायन एवं वाद्यो पर मुख्य रूप से मध्यलय की रचना ही गाई व बजाई जाती है । चारताल पखावज पर बजाने वाली बारह मात्रा की ताल है परन्तु आडाचारताल का पखावज पर बजने वाली ताल से कोई सम्बन्ध नही है यद्यपि नाम से सम्बन्ध का भ्रम होता है। इसमें एकल वादन भी तबला वादकों द्वारा प्रस्तुत किया जाता है। इसका स्वरूप मध्य लय में ही स्थापित होता है। द्रुत एवं अति द्रुत लय में प्रायः इस ताल का प्रयोग नही किया जाता है। चौदह मात्रा की ही तबले पर बजने वाली झूमरा ताल, दीपचन्दी ताल, एवं कैद फरोदस्त ताल है जिनका स्वरूप एवं ताल संरचना आडाचारताल एवं एक दूसरे से भिन्न है एवं इन तालों का संगीत में प्रयोग भी भिन्न रूप में होता है। यही समान मात्रा की तबले पर बजने वाली भिन्न तालों का औचित्य भी है। झूमरा ताल का प्रयोग विलम्बित स्थान की रचना के लिए ही किया जाता है एवं इसका प्रयोग मध्य एवं द्रुत लय हेतु नही किया जाता है। दीपचन्दी ताल मध्यलय में भी प्रयोग की जाती है जो बृज की होली एवं चैती गायन के साथ बजाई जाती है। दीपचन्दी ताल को चॉचंर भी कहा जाता है। कैद फरोदस्त ताल मध्य लय में गायन एवं वादन की रचनाओं हेतु प्रयोग की जाती है।

आडाचार ताल की संरचना निम्न प्रकार है :–

मात्रा – चौदह, विभाग – सात (2+2+2+2+2+2+2) प्रत्येक विभाग दो मात्रा का है। पहली मात्रा पर सम चार, सात,एवं ग्यारह पर ताली पांच आठ एवं तेरह मात्रा पर खाली है।

<u>ठेका–</u>

धिं	तिरकिट	धिं	ना	तू	ना	क	ता	तिरकिट	धि	ना	धि	धि	ना
X		2		0		3		0		4		0	

<u>6.3.2 गजझम्पा ताल का परिचय</u> –– यह पखावज पर बनने वाली पन्द्रह मात्रा की ताल है। यह ताल सामान्य प्रचलन में नहीं है। इसमें ध्रुपद शैली में गायन एवं वादन प्रस्तुत किया जाता है। इसमें विभागों की मात्राओं के विषय में मतभेद है। एक मत के अनुसार पहले तीन विभाग चार–चार मात्रा के है एवं अन्तिम विभाग तीन मात्रा का है। इसमें कुल चार विभाग है। इसके अनुसार ताल संरचना एवं स्वरूप निम्न प्रकार से है :–

मात्रा – पन्द्रह, विभाग चार (4+4+4+3)

<u>ठेका–</u>

धा दीं नक तक	धा दीं नक तक	दीं नक तक तिट	कत गदी गिन
X	2	0	3

पहली मात्रा पर सम, पांचवी एवं तेरहवी मात्रा पर ताली एवं नौवी मात्रा पर खाली है।

अन्य मत के अनुसार पन्द्रह मात्रा को चार ही विभागो में बांटा गया है परन्तु तीसरा विभाग तीन मात्रा एवं अन्तिम चौथा विभाग चार मात्रा का है। इसके अनुसार ताल संरचना एवं स्वरूप निम्न है।

धा दीं नक तक	धा दीं नक तक	दीं नक तक	तिट कत गदी गिन
X	2	0	3

ठेके के बोल के अनुसार दूसरा मत ही अधिक तर्क संगत लगता है।

<u>6.3.3 तीवरा ताल का परिचय</u> – इसे तीव्रा या तेवरा नाम से भी जाना जाता है। कुछ विद्वान इसे गीतांगी भी कहते हैं। वैसे तो यह पखावज के महत्वपूर्ण तालों में से एक है किन्तु इसे तबले पर भी बजाया जाता है। तीवरा ताल की संरचना रूपक ताल की भांति है। यह दक्षिण भारतीय संगीत की मिश्र जाति के त्रिपुट ताल के समान है। पखावज पर एकल वादन में तथा गायन में इसका प्रयोग ध्रुपद शैली की मध्य एवं द्रुत लय की रचनाओं के साथ किया जाता है। इसमें परन, टुक्ड़े,, तिहाईयाँ आदि रचनाएं बजाई जाती हैं। तबले पर इसका प्रयोग ध्रुपद अंग की गायकी के साथ खुले अंग के रूप में किया जाता है। इसे विलम्बित लय में प्रयोग करने का प्रचलन नहीं हैं।

यह एक विषमपदीय ताल है। इसमें 7 मात्राएं होती हैं जो 3/2/2 – कुल 3 विभागों में बँटी होती हैं। पहले विभाग में तीन तथा दूसरे व तीसरे में दो–दो मात्राएं होती हैं। इसकी पहली, चौथी व छठी मात्रा पर ताली होती है। इसमें खाली नही होती है।

मात्रा – 7, विभाग – 3, ताली – 1, 4 व 6 पर

ठेका–

धा	दीं	ता	तिट	कत	गदि	गन	धा
×			2		3		×

6.4.1 आडाचारताल में लयकारियां :–

आडाचारताल–

मात्रा – 14, विभाग – 7, ताली – 1, 3, 7 व 11 पर खाली –5, 8 व 13 पर

आडाचारताल का ठेका :–

धिं	तिरकिट	धिं	ना	तू	ना	क	ता	तिरकिट	धि	ना	धि	धि	ना	धिं
×		2		0		3		0		4		0		×

दुगुन, तिगुन एवं चौगुन की लयकारी को क्रमशः दो बार, तीन बार एवं चार बार प्रयोग किया जाता है।

आडाचारताल की दुगुन :–

धिंतिरकिट	धिंना	तूना	कता	तिरकिटधि	नधि	धिना	धिंतिरकिट
×		2		0		3	
धिंना	तूना	कता	तिरकिटधि	नधि	धिना	धिं	
0		4		0		×	

आडाचारताल की तिगुन :–

धिंतिरकिटधिं	नातूना	कतातिरकिट	धिंनाधिं	धिंनाधिं	तिरकिटधिंना	तूनाक	तातिरकिटधिं
×		2		0		3	
नाधिंधिं	नाधिंतिरकिट	धिंनातू	नाकता	तिरकिटधिंना	धिंधिंना	धिं	
0		4		0		×	

आडाचारताल की चौगुन :–

धिंतिरकिटधिंना	तूनाकता	तिरकिटधिंनाधिं	धिनाधिंतिरकिट	धिंनातूना	कतातिरकिटधि
×		2		0	
नाधिधिना	धिंतिरकिटधिंना	तूनाकता	तिरकिटधिंनाधिं	धिनाधिंतिरकिट	धिंनातूना

3 कतातिरकिटधि नाधिधिना 0	0 धिं ×	4	

6.4.2 गजझम्पा ताल में लयकारियां :—

गजझम्पा ताल :—

मात्रा—15, विभाग—4, ताली — 1, 5 व 13 पर खाली — 9 पर

गजझम्पा ताल का ठेका :—

धा दीं नक तक । धा दीं नक तक । दीं नक तक तिट । कत गदी गिन ।
× 2 0 3

गजझम्पा ताल की दुगुन :—

धादीं ×	नकतक	धादीं	नकतक	दींनक 2	तकतिट	कतगदी	गिनधा	
दींनक 0	तकधा	दींनक	तकदीं	नकतक 3	तिटकत	गदीगिन		धा ×

गजझम्पा ताल की तिगुन :—

धादींनक ×	तकधादीं	नकतकदीं	नकतकतिट	कतगदीगिन
धादींनक 2	तकधादीं	नकतकदीं	नकतकतिट	कतगदिगन
धादींनक	तकधादीं	नकतकदीं	नकतकदीं	कतगदीगिन

3

धा

×

गजझम्पा ताल की चौगुन :—

धादींनकतक ×	धादींनकतक	दींनकतकतिट	कतगदिगनधा
दींनकतकधा 2	दींनकतकदीं	नकतकतिटकत	गदिगनधादीं
नकतकधादीं 0	नकतकदींनक	तकतिटकतगदि	गनधादींनक
तकधादींनक 3	तकदींनकतक	तिटकतगदिगन	

6.4.3 तीवरा ताल में लयकारियां :–

तीवरा ताल :–

मात्रा – 7, विभाग – 3, ताली – 1, 4 व 6 पर

तीवरा ताल ठेका :–

धा ×	दीं	ता	तिट 2	कत	गदि 3	गन	धा ×

तीवरा ताल की दुगुन :–

धादीं ×	तातिट	कतगदि	गनधा 2	दींता	तिटकत 3	गदिगन	धा ×

तीवरा ताल की तिगुन :–

धादींता ×	तिटकतगदि	गनधादीं	तातिटकत 2	गदिगनधा	दींतातिट 3	कतगदिगन	धा ×

तीवरा ताल की चौगुन :–

धादींतातिट ×	कतगदिगनधा	दींतातिटकत	गदिगनधादीं 2	तातिटकतगदि	गनधादींता 3	तिटकतगदिगन	धा ×

अभ्यास प्रश्न

क) निम्न के उत्तर सत्य अथवा असत्य में दीजिए :–

1. आडाचारताल में 07 विभाग होते हैं।
2. आडाचारताल तबले पर बजाने वाली ताल है।
3. गजझम्पा ताल में चौथी मात्रा पर खाली है।
4. गजझम्पा ताल का वादन पखावज वाद्य पर किया जाता है।
5. तीवरा ताल में कायदा बजाया जाता है।

6.5 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप पाठ्यक्रम की तालों को जान चुके होंगे। आप प्रत्येक ताल की ताल संरचना को भी समझ चुके होंगे। संगीत में विभिन्न गायन शैलियों के साथ निश्चित तालों का प्रयोग किया जाता है, अतः इसी आधार पर विभिन्न तालों की रचना की गई। समान मात्राओं की विभिन्न तालों का आधार भी यही है। इस इकाई में प्रत्येक ताल के संगीत में प्रयोग के विषय में आपने अध्ययन किया, अतः इस अध्ययन के पश्चात आप संगीत में तालों का प्रयोग भली–भांति कर पाएंगे। आप इन तालों के विभिन्न स्वरुपों को भी जान चुके होंगे।

6.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

क) निम्न के उत्तर सत्य अथवा असत्य में दीजिए :–

1. सत्य 2. सत्य 3. असत्य 4. सत्य 5. असत्य

6.7 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. श्रीवास्तव, श्री गिरीश, ताल परिचय भाग –3, रूबी प्रकाशन मलाका, इलाहाबाद।
2. मिश्र, श्री विजय शंकर, तबला पुराण, कनिष्क पब्लिशर्स, नई दिल्ली।
3. वसन्त, संगीत विशारद, संगीत कार्यालय, हाथरस।

6.8 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. सेन, डॉ0 अरूण कुमार, भारतीय तालों का शास्त्रीय विवेचन, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल।
2. शर्मा, श्री भगवतशरण, ताल प्रकाश, संगीत कार्यालय हाथरस।

6.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1. पाठ्यक्रम की किन्हीं दो तालों का पूर्ण परिचय दीजिए एवं उनकी दुगुन, तिगुन व चौगुन लयकारी भी लिपिबद्ध कीजिए।

इकाई 7 – पाठ्यक्रम की तालों आड़ाचारताल, गजझम्पा ताल एवं तीवरा ताल में तबले/पखावज की रचनाओं(पाठ्यक्रमानुसार) को लिपिबद्ध करना।

7.1 प्रस्तावना

7.2 उद्देश्य

7.3 पाठ्यक्रम की तालों में तबले की रचनाएं

7.3.1 आडाचारताल

7.3.2 गजझम्पा ताल

7.3.3 तीवरा ताल

7.4 सारांश

7.5 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

7.6 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

7.7 निबन्धात्मक प्रश्न

7.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0 संगीत के पाठ्यक्रम बी0ए0एम0टी0(एन)–202 की सातवीं इकाई है। इससे पहले की इकाईयों के अध्ययन के बाद आप संगीत में प्रयोग होने वाली प्रचलित तालों का परिचय प्राप्त कर चुके होंगे। आप तालों की संरचना एवं उनके उपयोग को भी समझ गए होंगे, जिससे आप इनका सफल प्रयोग क्रियात्मक रूप में कर पाएंगे।

इस इकाई में आप तबला वादन में प्रयोग होने वाली रचनाओं एवं उनको लिपिबद्ध करने के विषय में अध्ययन करेंगे जिसके लिए इस इकाई में भातखण्डे ताललिपि पद्धति का प्रयोग किया गया है।

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप तबले की किसी भी रचना को लिपिबद्ध कर भविष्य के सन्दर्भ हेतु सुरक्षित रख पाएंगे एवं इनको क्रियात्मक रूप में प्रस्तुत करने में सक्षम होंगे।

7.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप :–

1. तबले की रचनाओं को लिपिबद्ध कर पाएंगे।
2. तबले की उपलब्ध रचनाओं को पढ़ कर इनको क्रियात्मक रूप में प्रस्तुत कर पाएंगे।
3. यह ही जान पायेंगे कि एक ही रचना को उसकी मात्राओं के अनुसार किस–किस ताल में बजाया या पढा जा सकता है।

7.3 पाठ्यक्रम की तालों में तबले की रचनाएं

7.3.1 आड़ाचारताल– पाठ्यक्रम की आड़ाचारताल में विभिन्न रचनाएं लिपिबद्ध कर प्रस्तुत की जा रही है।

ठेका

1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13	14	1
धिं	तिरकिट	धी	ना	तू	ना	क	त्ता	तिरकिट	धि	ना	धी	धी	ना	धिं
×		2		0		3		0		4		0		×

उठान

धाधिऽन,	किऽकतातिर	किटतकतिरकिट,	तकतिरकिटतक	तिरकिटधाती,	धाऽधाती,	धाऽधाती,	
×		2		0		3	
धाऽतिरकिट,	धातीधाऽ,	धातीधाऽ,	धातीधाऽ,	तिरकिटधाती	धाऽधाती,	धाऽधाती,	धिं
	0		4		0		×

पेशकार

मुख्य बोल

धिंऽधिंता,	ऽधाधिंता,	धातीधाती,	धाधाधिंता,	ऽधाधिंता,	धातीधाती,	धाधातिंता,
×		2		0		3
तिंऽतिंता,	ऽतातिंता,	तातीताती,	तातातिंता,	ऽधाधिंता,	धातीधाती,	धाधाधिंधा,
	0		4		0	

पलटा 1

ऽधाधिंता	ऽधाधिंता	धातीधाती	धाधाधिंता	ऽधाधिंता	धातीधाती	धाधातिंता
×		2		0		3
ऽतातिंता	ऽतातिंता	तातीताती	तातातिंता	ऽधाधिंता	धातीधाती	धाधाधिंधा
	0		4		0	

पलटा 2

ऽधाऽधा	ऽधाधिंता	ऽधाधिंता	धाधाधिंता	ऽधाधिंता	धातीधाती	धाधातिंता
×		2		0		3
ऽताऽता	ऽतातिंता	ऽतातिंता	तातातिंता	ऽधाधिंता	धातीधाती	धाधाधिंता
	0		4		0	

पलटा 3

धिंताधाती	धाधाधिंता	धातीधाती	धाधाधिंता	ऽधाधिंता	धातीधाती	धाधातिंता
×		2		0		3
तिंताताती	तातातिंता	तातीताती	तातातिंता	ऽधाधिंता	धातीधाती	धाधाधिंता
	0		4		0	

तिहाई

धातीधाती	धाधाधिंता	धिंताधाती	धाधातिंता	धा	धातीधाती	धाधाधिंता	
×		2		0		3	
धिंताधाती	धाधाधिंता	धा	धातीधाती	धाधाधिंता	धिंताधाती	धाधातिंता	धिं
	0		4		0		×

कायदा – चतुरश्र जाति

मुख्य बोल

धातिरकिटधि	तिटधिन	धातीगिन	धातिरकिटधि	तिटधिन	धातीगिन	तिनाकिन
×		2		0		3
तातिरकिटति	तिटधिन	तातीकिन	धातिरकिटधि	तिटधिन	धातीगिन	धिनागिन
	0		4		0	

दुगुन

धातिरकिटधितिटधिन	धातीगिनधातिरकिटधि	तिटधिनधातीगिन	तिनाकिनतातिरकिटति
×		2	
तिटकिनतातीकिन	धातिरकिटधितिटधिन	धातीधिनधिनागिन	धातिरकिटधितिटधिन
0		3	
धातीगिनधातिरकिटधि	तिटधिनधातीगिन	तिनाकिनतातिरकिटति	तिटकिनतातीकिन
0		4	
धातिरकिटधितिटधिन	धातीगिनधिनागिन		
0			

पलटा 1

धातीधिनधातिरकिटधि	तिटधिनधातीगिन	धातिरकिटधितिटतिधिन	धातीगिनधातिरकिटधि	तिटधिनधातीगिन
×		2		0
धातिरकिटधितिटधिन	धातीगिनतिनाकिन	तातीकिनतातिरकितति	तिटकिनतातीकिन	तातिरकिटतितिटकिन
	3		0	
तातीकिनधातिरकिटधि	तिटधिनधातीगिन	धातिरकिटधितिटधिन	धातीगिनधिनागिन	
4		0		

पलटा 2

तिटधिनधातीगिन	तिटधिनधातीगिन	तिटधिनधातिरकिटधि	तिटधिनधातिरकिटधि	तिटधिनधातीगिन
×		2		0
धातिरकिटधितिटधिन	धातीगिनतिनाकिन	तिटकिनतातीकिन	तिटकिनतातीकिन	तिटधिनधातिरकिटधि
	3		0	
तिटधिनधातिरकिटधि	तिरधिनधातीगिन	धातिरकिटधितिटधिन	धातीगिनधिनागिन	
4		0		

पलटा 3

तिटधिनतिटधिन	धातीगिनधातिरकिटधि	तिटधिनतिटधिन	धातीगिनधातिरकिटधि	तिटधिनधातीगिन
×		2		0
धातिरकिटधितिटधिन	धातीगिनतिनाकिन	तिटकिनतिटकिन	तातिकिनतातिरकिटति	तिटकिनतिरकिन
	3		0	
धातीगिनधातिरकिटधि	तिटधिनधातीगिन	धातिरकिटधितिटधिन	धातीगिनधिनागिन	
4		0		

तिहाई

धातीगिनधिनागिन	धातिरकिटधितिटधिन	धातीधिनधिनागिन	धाऽधाऽ	धाऽ
×		2		0
धातीगिनधिनागिन	धातिरकिटधितिटधिन	धातीगिनधिनागिन	धाऽधाऽ	धाऽ
	3		0	
धातीगिनधिनागिन	धातिरकिटधितिटधिन	धातीगिनधिनागिन	धाऽधाऽ	धिं
4		0		×

कायदा तिस्त्र जाति

मुख्य बोल

धिऽन	धगेन	धाऽऽ	धातिरकिट
×		2	
धितिट	धिनति	ताकिन	तिऽन
0		3	
तकेन	ताऽऽ	धातिरकिट	धितिट
0		4	
धिनधि	नागिन		
0			

दुगुन

धिऽनधगेन	धाऽऽधातिरकिट	धितिटधिनति	नाकिनतिऽन
×		2	
तकेनताऽऽ	धातिरकिटधितिट	गिनधिनागिन	धिऽनधगेन
0		3	

धाऽऽधातिरकिट	धितिटधिनति	नाकिनतिऽन	तकेनताऽऽ	
0		4		
धातिरकिटधितिट	गिनधिनागिन			
0				

पलटा 1

धगेनधिऽन	धगेनधाऽऽ	धातिरकिटधगेन	धातिरकिटधितिट
×		2	
धातिरकिटधगेन	धातिरकिटधितिट	धिनतिनाकिन	तकेनतिऽन
0		3	
तकेनताऽऽ	तातिरकिटतकेन	तातिरकिटतितिट	धतिरकिटधगेन
0		4	
धातिरकिटधितिट	धिनधिनागिन		
0			

पलटा 2

धातिरकिटधगेन	धिऽनधगेन	धाऽऽधगेन	धातिरकिटधितिट
×		2	
धातिरकिटधगेन	धातिरकिटधितिट	धिनतिनाकिन	तातिरकिटतकेन
0		3	
तिऽनतकेन	ताऽऽतकेन	तातिरकिटतितिट	धातिरकिटधगेन
0		4	
धातिरकिटधितिट	धिनधिनागिन		
0			

पलटा 3

धातिरकिटधितिट	धातिरकिटधगेन	धिऽनधगेन	धाऽऽधगेन
×		2	
धातिरकिटधगेन	धातिरकिटधितिट	धिनतिनाकिन	तातिरकिटतितिट
0		3	
तातिरकिटतकेन	तिऽनधगेन	ताऽऽतकेन	धातिरकिटधगेन
0		4	
धातिरकिटधितिट	धिनधिनागिन		
0			

तिहाई

धातिरकिटधितिट	धातिरकिटधगेन	धातिरकिटधितिट	धिनतिनाकेन	
×		2		
धा	धातिरकिटधितिट	धातिरकिटधगेन	धातिरकिटधितिट	
0		3		
धिनातिनाकिन	धा	धातिरकिटधितिट	धातिरकिटधगेन	
0		4		
धातिरकिटधितिट	धिनातिनाकिन			धिं
0				×

रेला –मुख्य बोल

धातिर	किटतक	तिरकिट	धातिर
×		2	
किटतक	तातिर	किटतक	तातिर
0		3	
किटतक	तिरकिट	धातिर	किटतक
0		4	
धातिर	किटतक		
0			

दुगुन

धातिरकिटतक	तिरकिटधातिर	किटतकतातिर	किटतकतातिर
×		2	
किटतकतिरकिट	धातिरकिटतक	धातिरकिटतक	धातिरकिटतक
0		3	
तिरकिटधातिर	किटतकतातिर	किटतकतातिर	किटतकतिरकिट
0		4	
धातिरकिटतक	धातिरकिटतक		
0			

पलटा 1

धातिरकिटतक	तिरकिटधाऽ	धातिरकिटतक	तिरकिटधातिर
×		2	
किटतकतिरकिट	धातिरकिटतक	तातिरकिटतक	तातिरकिटतक
0		3	
तिरकिटताऽ	तातिरकिटतक	तिरकिटतातिर	किटतकतिरकिट
0		4	
धातिरकिटतक	धातिरकिटतक		
0			

पलटा 2

धातिरकिटतक	तिरकिटधातिर	किटतकतिरकिट	धातिरकिटतक
×		2	
तिरकिटधाऽ	धातिरकिटतक	तातिरकिटतक	तातिरकिटतक
0		3	
तिरकिटतातिर	किटतकतिरकिट	धातिरकिटतक	तिरकिटधाऽ
0		4	
धातिरकिटतक	धातिरकिटतक		
0			

पलटा 3

तिकिटधातिर	किटतकतिरकिट	धातिरकिटतक	तिरकिटधातिर
×		2	
किटतकतिरकिट	धातिरकिटतक	तातिरकिटतक	तिरकिटतातिर
0		3	
किटतकतिरकिट	तातिरकिटतक	तिरकिटधातिर	किटतकतिरकिट
0		4	
धातिरकिटतक	धातिरकिटतक		
0			

तिहाई

तिरकिटधातिर	किटतकतिरकिट	धातिरकिटतक	तिरकिटधाती	
×		2		
धा	तिरकिटधातिर	किटतकतिरकिट	धातिरकिटतक	
0		3		
तिरकिटधाती	धा	तिरकिटधातिर	किटतकतिरकिट	
0		4		
धातिरकिटतक	तिरकिटधाती	धिं		
0		×		

गत

धाऽन	धितिट	तकिट	धितिट	
×		2		
धातिरकिट	धितिट	कताग	दीकिन	
0		3		
दींऽदीं	ऽदींऽ	नगन	गनग	
0		4		
तकट	तकट	धाऽक	धातिट	
0		×		
धाऽन	धाऽन	धा	धाऽक	
2		0		
धातिट	धाऽन	धाऽन	धा	
3		0		
धाऽक	धातिट	धाऽन	धाऽन	धिं
4		0		×

परन

धिटधिट	धागेतिट	कऽधातिट	धागेतिट	
×		2		
कऽधातिट	कऽधातिट	कऽधातिट	धागेतिट	
0		3		
गदीगन	नागेतिट	धागेतिट	ताकेतिट	
0		4		
कतिटता	ऽनताके	तिटकता	गदीगिन	
0		×		
धित्ततगे	ऽनाधित्त	तगेऽन	धित्तताऽ	
2		0		
तिरकिटधित्त	तगेऽन	धा	तिरकिटधित्त	
3		0		
तगेऽन	धा	तिरकिटधित्त	तगेऽन	धिं
4		0		×

चक्करदार – सादा

घेतिरकिटतक	ता	घेतिरकिटतक	ताऽकता	
×		2		
गऽदींऽ	कतधाऽ	कतिं	टता	
0		3		
धातिरकिटतक	ताऽकता	धाऽकता	धाघेतिर	
0		4		
किटतकताऽ	कताधाऽ	कताधाऽ	घेतिरकिटतक	
0		×		
ताऽकता	धाऽकता	धा		× 3
2		0		

उक्त बोल उन्नीस मात्रा का है अतः 3 बार बजाने पर चार आवृति के बाद सम पर आएगा।

चक्करदार – फरमाइशी

घेतिरकिटतक	ताकटधा	घेतिरकिटतक	तकिटधा	
×		2		
घेतिरकिटतक	ताकिटधा	ऽतकिट	धाऽकिट	
0		3		
धाऽकता	गऽदींऽ	कताधाऽ	घेतिरकिटतक	
0		4		
तातिरकिटतक	ताकडान	धा	ऽ	
0		×		
तातिरकिटतक	ताकडान	धा	ऽ	
2		0		
तातिरकिटतक	ताकडान	धा	ऽ	× 3
3		0		

7.3.2 गजझम्पा ताल – यह ताल पखावज पर बजाई जाने वाली ताल है अतः इसमें रचनाएं तबले पर खुले हाथ से बजाई जाएगी। इस ताल में पेशकार एवं कायदा नहीं बजाए जाते हैं।

ठेका

1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13	14	15	1
धा	दीं	नक	तक	धा	दीं	नक	तक	तीं	नक	तक	तिट	कता	गदी	गिन	धा
×				2				0			3				×

गजझम्पा ताल में अन्तिम दो एवं चार मात्रा में निम्न मुखडे बजाकर सम पर आ सकते हैं:

मुखडा 1– तिटकता तिटकतागदीगिन

मुखडा 2– तिटकता, तिटकतागदीगनन, धाऽगदीगिन, धाऽगदीगिन

मुखडा 3– तिटकतागदीगिन, धाऽ, गदीगिनधा, ऽगदीगिन

तिहाई

1 तिटकता गदिगन धाऽऽऽ धाऽऽऽ | धाऽऽऽ ऽऽतिट कतागदि
×, 2

गनधाऽ | ऽऽधाऽ ऽऽधाऽ ऽऽऽऽ | तिटकता गदिगन धाऽऽऽ धाऽऽऽ
0, 3

धा

2 तिटकतागदीगिन धातिटकता गदीगिनधा तिटकतागदीगिन | धा1 2तिटकता गदीगिनधा
×, 2

तिटकतागदीगिन | धातिटकता गदीगिनधा 1 2 | तिटकतागदीगिन धातिटकता गदीगिनधा तिटकतागदीगिन |
0, 3

धा
×

टुकडा 1

घेघेतिट	घेघेतिट	किऽनक	तिरकिट	तिटकता	गदीगिन	धाधा	
×				2			
धा	तिटकता	गदीगिन	धाधा	धा	तिटकता	गदीगिन	धाधा	धा
	0			3				×

टुकडा 2

कऽतिट	घेघेतिट	कताकता	घेघेतिट	कताघेघे	तिटकता	धाऽकता	
×				2			
धाऽकता	धाऽतिट	कताधाऽ	कताधाऽ	कताधाऽ	तिटकता	धाऽकता	धाऽकता	धा
	0			3				×

टुकडा 3

धित्तधित्त	तिरकिटधित्त	धिटधिट	कऽधातिट	धागेतिट	कऽधातिट	ताकेतिट	
×				2			
कऽधातिट	कतागदी	गिनधाऽ	धाऽकता	गदीगिन	धाऽधाऽ	कतागदी	गिनधाऽ	धा
	0			3				×

परन

धिटधिट	धागेतिट	कऽधातिट	धागेतिट	कऽधातिट	कऽधातिट	कऽधातिट	
×				2			
धागेतिट	गदीगिन	नागेतिट	धागेतिट	कतिटत	किनताके	तिटकता	गदीगिन
	0			3			
धित्ततगे	ऽनधित्त	तगेऽन	धित्तताऽ	तिरकिटधित्त	तगेऽन	धाधा	
×				2			
धा	तिरकिटधित्त	तगेऽन	धाधा	धा	तिरकिटधित्त	तगेऽन	धाधा	धा
	0			3				×

चक्करदार – सादा

[घेतिरकिटतक	तकेतिट	कतागदी	गिननाके	तिटकता	गदीगिन	धाऽदींऽ	
×				2			
ताऽतिट	कतिटत	किनताके	तिटकता	गदीगिन	धा	तिटकता	गदीगिन
	0			3			
धा	तिटकता	गदीगिन	धा	1	2	]× 3	
×				2			

चक्करदार – फरमाइशी

[धागेतिट	धागेतिट	ताकेतिट	ताकेतिट	कऽधातिट	ताकेतिट	गदीगिन	
×				2			
नागेतिट	कतिटत	किनताके	तिटकता	गदीगिन	नागेतिट	कतधा	ऽनधाऽ
	0			3			
धा	ऽ	कताधा	ऽनधाऽ	धा	ऽ	कताधा	
×				2			
ऽनधाऽ	धा	]× 3					
	0			3			

7.3.3 तीवरा ताल – यह ताल पखावज पर बजाई जाती है। इसमें टुकड़ा, परन, चक्करदार सादा, फरमाइशी व तिहाई रूपक ताल की भांति ही बजेगी किन्तु तबले पर खुले हाथ से प्रयोग की जाएगी।

ठेका

1	2	3	4	5	6	7	1
धा	दीं	ता	तिट	कता	गदि	गन	धा
×			2		3		×

टुकडा

दींदीं	तिटतिट	धागेतिट		
×				
ताकेतिट	कऽधातिट	कऽताऽ	धातिरकिटतक	
2		3		
तातिरकिटतक	ताकड़ान	धातातिर		
×				
किटतकता	कड़ानधा	तातिरकिटतक	ताकड़ान	धा
2		3		×

परन

धिटधिट	धागतिट	कऽधातिट		
×				
धागेतिट	कऽधातिट	कऽधातिट	कऽधातिट	
2		3		
धागेतिट	गदिगिन	नागेतिट		
×				
धागेतिट	ताकेतिट	कतिटत	किनताके	
2		3		
तिटकता	गदिगिन	धागेतिट		
×				
ताकेतिट	धित्ततगे	ऽगधित्त	तगेऽन	
2		3		
धित्ता	तिरकिटधित्त	तगेऽन		
×				
धा	तगेऽन	धा	तेगऽन	
2		3		
धा	तिरकिटधित्त	तगेऽन		
×				
धा	तगेऽन	धा	तेगऽन	
2		3		
धा	तिरकिटधित्त	तगेऽन		
×				
धा	तगेऽन	धा	तगेऽन	धा
2		3		×

चक्करदार (सादा)

धागेतिट	धागेतिट	ताकेतिट	
×			
ताकेतिट	कऽधातिट	ताकेतिट	गदीगिन
2		3	
नागेतिट	कतिटत	किनताके	
×			
तिटकता	गदीगिन	धा	तिटकता
2		3	
गदीगिन	धा	तिटकता	
×			
गदीगिन	धा	धागेतिट	धागेतिट
2		3	

ताकेतिट	ताकेतिट	कऽधातिट		
×				
ताकेतिट	गदीगिन	नागेतिट	कतिटत	
2		3		
किनताके	तिटकता	गदीगिन		
×				
धा	तिटकता	गदिगिन	धा	
2		3		
तिटकता	गदीगिन	धा		
×				
धागेतिट	धागेतिट	ताकेतिट	ताकेतिट	
2		3		
कऽधातिट	ताकेतिट	गदीगिन		
×				
नागेतिट	कतिटत	किनताके	तिटकता	
2		3		
गदीगिन	धा	तिटकता		
×				
गदीगिन	धा	तिटकता	गदीगन	धा
2		3		×

तीवरा ताल में चक्करदार हेतु 18 मात्रा का तिहाई युक्त बोल जिसका 'धा' उन्नीसवीं मात्रा पर आएगा को तीन बार बजाने से चक्कदार बोल प्राप्त होगा जो कुल 56 मात्रा का होगा। 18+1 = 19×3 = 56+1 = 57

चक्करदार – फरमाइशी

धिरधिरकिटतक	तकटधा	धिरधिरकिटतक	
×			
तकटधा	धिरधिरकत	धिरधिरकत	तकटधा
2		3	
तकटधा	तिट	कता	
×			
गदी	गिन	कतधिरधिर	किटतकतकट
2		3	
धाऽधिरधिर	किटतकतकट	धाऽधिरधिर	
×			
किटतकतकट	धा	धिरधिरकिटतक	तकटधा
2		3	
धिरधिरकिटतक	तकटधा	धिरधिरकत	
×			

धिरधिरकत	तकटध	तकटधा	तिट	
2		3		
कता	गदी	गिन		
×				
कतधिरधिर	किटतकतकट	धाऽधिरधिर	किटतकतकट	
2		3		
धाऽधिरधिर	किटतकतकट	धा		
×				
धिरधिरकिटतक	तकटधा	धिरधिरकिटतक	तकटधा	
2		3		
धिरधिरकत	धिरधिरकत	तकटधा		
×				
तकटधा	तिट	कता	गदी	
2		3		
गिन	कतधिरधिर	किटतकतकट		
×				
धाऽधिरधिर	किटतकतकट	धाऽधिरधिर	किटतकतकट	धा
2		3		×

<u>तिहाई</u>

तिटकता	गदिगन	धातिट	कतागदि	गनधा	तिटकता	गदिगन	धा
×			2		3		×

अभ्यास प्रश्न

क) लघु उत्तरीय प्रश्न :

1. किसी भी ताल में फरमाइशी चक्करदार कितनी आवृति की होती है?
2. आडाचारताल में दिया गया सादा चक्करदार टुकडा का एक चक्कर कितनी मात्रा का है एवं अन्य किस ताल में बजाया जा सकता है?

7.4 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप पाठ्यक्रम की तालों में तबले की रचनाओं को लिपिबद्ध करना सीख गए होंगे एवं इन रचनाओं को आप क्रियात्मक रूप में प्रस्तुत करने में सक्षम होंगे। आप जान चुके होंगे कि किसी रचना को लिपिबद्ध करते समय किन–किन बातों (जैसे ताली, खाली विभाग आदि) का ध्यान रखना आवश्यक है। किसी लिपिबद्ध रचना की पढन्त कैसे की जाती है तथा उसकी मात्राओं के अनुसार उसे किस–किस ताल में बजाया या पढ़ा जा सकता है, ये भी आप जान चुके होंगे। इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप स्वयं किसी ताल की रचना को अन्य ताल में प्रयोग करना भी जान गए होंगे, जो आपको सैद्धान्तिक एवं क्रियात्मक दोनों स्वरूपों में सहायक सिद्ध होगा।

7.5 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

क) लघु उत्तरीय प्रश्न :

1. फरमाइशी चक्करदार पॉच आवृति का होती है।
2. आडाचारताल का चक्करदार टुकडा का एक चक्कर 18 मात्रा का है अतः नौ मात्रा की ताल में बिना बदले बजाया जा सकता है।

7.6 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. श्रीवास्तव, श्री गिरीश चन्द्र, *ताल परिचय,* संगीत सदन प्रकाशन, इलाहाबाद।
2. श्रीवास्तव, श्री गिरीश चन्द्र, *ताल प्रभाकर प्रश्नोत्तरी,* संगीत सदन प्रकाशन, इलाहाबाद।
3. मिश्र, श्री विजय शंकर, *तबला पुराण,* कनिष्क पब्लिशर्स, नई दिल्ली।
4. मिश्र, पं0 छोटे लाल, *तबला ग्रन्थ,* कनिष्क पब्लिशर्स, नई दिल्ली।

7.7 निबन्धात्मक प्रश्न

1. पाठ्यक्रम की किसी एक ताल में मंच प्रदर्शन हेतु बजायी जाने वाली तबले की रचनाओं को लिपिबद्ध कीजिए।

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
हल्द्वानी, जिला नैनीताल, पिनकोड–263139
फोन नं0 : 05946–286000 / 01 / 02
फैक्स नं0 : 05946–264232,
टोल फ्री नं0 : 18001804025
ई–मेल : **info@uou.ac.in**
वेबसाईट : **www.uou.ac.in**